अध्याय : 4

"आठवाँ सर्ग" में चित्रित कालिदास

अध्याय : 4

"आठवाँ सर्ग" में चित्रित कालिदास

भूमिका

मोहन राकेश के "आषाढ़ का एक दिन" नाटक के प्रकाशन के बाद सुरेन्द्र वर्मा का नया नाटक प्रकाशित हुआ। इस नाटक में कविकुलगुरु कालिदास के चरित्र को परिलक्षित करते हुए रचनाकार की रचनाधर्मिता नया कालिदास के "कुमारसम्भव" के महाकाव्य के "आठवाँ सर्ग" में चित्रित शृंगार को नये जीवन सन्दर्भ में जुड़ने का प्रयास सुरेन्द्र वर्मा के "आठवाँ सर्ग" नाटक मे हुआ है। साहित्य में श्लीलता-अश्लीलता साहित्यकार का व्यक्ति-स्वातंत्र्य, साहित्यकार को दिये जाने वाले पुरस्कार साहित्यकार का स्वाभिमान आदि आधुनिक समस्याओं को प्रस्तुत करने का नाटककार सुरेन्द्र वर्मा का प्रयास उल्लेखनीय है। इस नाटक में ऐतिहासिक कालिदास के मिथक को आधुनिक जीवन के संदर्भ में जोड़ने का नाटककार का प्रयास स्तुत्य है। इन तथ्यों को ध्यान में रखकर सुरेन्द्र वर्मा लिखित "आठवाँ सर्ग" नाटक मे चित्रित कालिदास के चरित्र को मुख्यतया विवेचित-विश्लेषित करना हमारे अध्ययन का लक्ष्य है।

कालिदास का जीवन-वृत्त

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा के "आठवाँ सर्ग" नाटक में चित्रित कालिदास के जीवनवृत्त के बारे में कालिदास के जन्मस्थान, उसका बचपन आदि के बारे में विशेष जानकारी नही मिलती। इस नाटक में कालिदास के जीवन-सम्बन्धी एक जानकारी प्राप्त होती है , कीर्तिभट्ट कालिदास का मित्र है और कालिदास का समकालीन

साहित्यकार दिङ्नाग का उल्लेख नाटककार ने किया है। नाटक में कालिदास के चरित्र पर मुख्यतया जो प्रकाश डाला गया है उसमें कालिदास और प्रियंगुमंजरी का वैवाहिक जीवन और वैवाहिक जीवन, से प्राप्त पति-पत्नी की श्रृंगारिक रति-विलास क्रीडाएँ सर्वप्रमुख हैं।

वैवाहिक जीवन

कालिदास की पत्नी प्रियगुंमंजरी एक विदुषी युवती है। हाल ही में उसका विवाह कालिदास से हुआ है। उसकी यह धारणा है कि कालिदास रचित "कुमारसम्भव" के "आठवाँ सर्ग" में जिस उमा का चरित्र खींचा गया है वह वास्तव में कालिदास की पत्नी प्रियंगुमंजरी का ही यथार्थ चित्र है। प्रियंगुमंजरी की जिज्ञासा पति-पत्नी के वार्तालाप में सहज ही दृष्टिगोचर होती है।

प्रियंगु : आर्य सौमित्र ने और कोई विशेष बात नही कही ?

कालिदास : क्या मतलब ?

प्रियंगु : यह नहीं पूछा कि इस नये सर्ग में उमा के चरित्र···उसके क्रिया कलाप का आधार कौन-सा व्यक्ति है ?

कालिदास : नहीं तो।

प्रियंगु : सुनते हुए गूढ़ भाव से मुसकराए तो होंगे ?

कालिदास : मैंने तो नहीं देखा।

प्रियंगु : सच कह रहे हो ? उन्होंने कुछ भी नहीं पूछा ?[1]

कालिदास : मुझे तो यही स्मरण आता है।[1]

इसमें सन्देह नहीं कि "कुमारसम्भव" का "आठवाँ सर्ग" कालिदास ने अपने विवाह के उपरान्त लिखा होगा। इसी कारण उसमें पति-पत्नी को प्रणय-क्रीडाएँ खुलकर लिखी गयी है।

वैवाहिक उन्मादक जीवन

"आठवाँ सर्ग" नाटक में नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने कालिदास की पत्नी प्रियंगुमंजरी के शयन कक्ष का वर्णन और उसमें पति-पत्नी के रूप में कालिदास

प्रियंगुमंजरी का अभिसार अनुमानित किया है। निम्नलिखित वार्तालाप देखिए -

प्रियवंदा : गवाक्ष बन्द, हल्का अँधेरा।···पलंग के पास कुछ खाली चषक होंगे। उन पर दो युगल अधरों के स्पर्श जैसे अभी तक कसमसा रहे हैं।

अनसूय : ऐसा ?

प्रियंवदा : कुछ देर चुपचाप उस शैया को परखना। उस पर अधमिलि कलियाँ बिखरी होंगी - म्लान···दोहरी हो चुकी, पंखुरियों को हल्के-से छूना, तो दो शरीरों के तप्त दबाव का आभास होगा।

अनसूया : सचमुच ?

प्रियंवदा : शुभ्र, श्वेत चादर पर यहाँ-वहाँ सिकुड़नें होंगी। एक ओर कुरंटक पुष्पों की माला पड़ी होगी - प्रगाढ़ आलिंगन में मसली हुई। सिरहाने एक कर्णफूल होगा, पैताने टूटी मेखला।

अनसूया : बेचारी !

प्रियवंदा : कुछ पल चुपचाप खड़ी रहना, तो धीरे-धीरे कई ध्वनियाँ उभरेंगी।

अनसूया : जैसे ?

प्रियवंदा : वस्त्रों की सरसराहट····आभूषणों की झंकार···साँसो की तीव्रता··बाँहों का कसाव"[2]

उपुर्यक्त वार्तालाप से यह संकेत जरूर मिलता है कि कालिदास-प्रियंगुमंजरी के मिलन का उन्मादक वर्णन वास्तव में कालिदास विरचित "कुमारसम्भव" के अष्टम् सर्ग का ही हिन्दी रूपांतरण है। "कुमारसम्भव" के आठवें सर्ग के प्रारम्भ में महाकवि कालिदास ने महादेव और उमा के विलास- क्रीडाओं का जो चित्र खींचा है वह श्रृंगार के यथार्थ का विशेषतः संयोग श्रृंगार के यथार्थ का सहज वर्णन है। साहित्यकार की साहित्य-साधना में पति-पत्नी मिलन में कुछ भी अश्लील नहीं होता है। बल्कि वह मानव की प्रकृति के अनुसार ही होता है।

"कुमारसम्भव" के आठवें सर्ग के कुछ श्लोक दृष्टव्य हैं -

"वासराणि कतिचित्कथञ्चन स्थाणुना रतमकारि चानया।
ज्ञातमन्मथरसा शनैः शनैः साऽमुमोच रतिदुःखशीलताम् ।।
सस्वजे प्रियमुरोनिपीडनं प्रार्थितं मुखमनेन नाहरत् ।
मेखलाप्रणयलोलतां गतं हस्तपस्य शिथलं रूरोध सा।।"[3]

अर्थात -

कुछ दिनों तक तो महादेवजी ज्यों-त्यों करके पार्वतीजी से प्रणय-क्रीडा करते रहे पर धीरे-धीरे जब पार्वतीजी को इसका रस मिलने लग तब इनकी भी झिझक धीरे-धीरे जाती रहीं। और तब वे एक दूसरे में समा जाते हैं। जब वे महादेवजी उनकी ओर मुँह बढ़ाते तो ये अपना मुँह हटाती नहीं थी और जब शंकरजी इनकी तगड़ी पकड़कर खींचते तो ये आधे मन से ही उनका हाथ रोकती।

पत्नी की प्रकृति के प्रति अनभिज्ञता

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" में यह दर्शाया है कि मानव जीवन में प्रकृति की अनिवार्यता क्या होती है ? और उसक सौंदर्य कैसे बिखेरता है ? इसके बारे में प्रियंगुमंजरी अनभिज्ञ है। उसका जीवन-यापन नगर में व्यतीत होने से, राजप्रासाद के बनावटी रूपों में व्यतीत होने से, उसे प्रकृति का सौन्दर्य भी अच्छी तरह से मालूम नहीं होता है। इसलिए प्रियंगुमंजरी के मन में इस बात का बड़ा मोह होता है कि वह दिनचर्या में प्रकृति के गुँथ जाने की प्रक्रिया को जाने।[4] वह कालिदास से कहती है कि "ऋतुसंहार", "मेघदूत" आदि ग्रंथों में जो प्रकृति का चित्रण कालिदास कर चुका है उसके साथ पूरी तरह तादात्म्य होना चाहती है।

इससे स्पष्ट है कि प्रियंगुमंजरी राजगृह में पली हुई है। साथ ही विदुषी भी है। लेकिन प्रकृति के और मानव-जीवन संबंध में जानने के लिए कठिनाई महसूस होती है और इसकी पूर्ति के लिए वह कालिदास के साथ हमेशा रहना पसन्द करती है। अतः इन दोनों का प्रभाव प्रियंगुमंजरी पर अवश्य दिखाई देता है।

"आठवाँ सर्ग" नाटक में कालिदास का वैवाहिक जीवन सुख, समृद्धि तथा पति-पत्नी के उन्मादक शृंगार से परिपूर्ण दिखाई देता है। साथ ही कालिदास के साहित्य-सृजन में उसकी प्रेरणा स्वीकार की गई है।

मित्रपरिवार और परिचारिका

सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" नाटक मे कालिदास के मित्रपरिवार में सौमित्र का और परिचारिकाओं में प्रियवंदा और अनसूया का उल्लेख किया है। घरेलू जीवन में इनका सहयोग कालिदास को प्राप्त होता है। कीर्तिभट्ट कालिदास का आस्थावान सेवक है।

साहित्य-साधना

महाकवि कालिदास की साहित्य-साधना अप्रतिम है। इसीलिए तो जर्मन कवि गेटे ने तथा डॉ.ए.बी.कीथ जैसे समीक्षकों ने उनके साहित्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। श्रेष्ठ सृजनशील साहित्यकार की साहित्य-साधना भी अनूठी होती है और इसीकारण उसकी साहित्य-साधना और उसके साहित्य को न समझने पर बड़ी बड़ी बहसें भी हो जाती हैं। महाकवि कालिदास इसका अपवाद नहीं। सुरेन्द्र वर्मा लिखित "आठवाँ सर्ग" नाटक में कालिदास की साहित्य-साधना की ओर कुछ संकेत मिलते हैं जिसका विवेचन-विश्लेषण यहाँ किया जा सकता है।

आठवाँ सर्ग का प्रारंभ

कालिदास संस्कृत के महाकवि और संस्कृत-कविकुलगुरू माने जाते हैं। सुरेन्द्र वर्मा ने नाटक के प्रारंभ में संस्कृत की निम्नलिखित काव्यपंक्तियाँ उद्धृत कर कालिदास की संस्कृत काव्य-प्रतिभा की ओर संकेत किया है। नाटक का एक नारी पात्र प्रियवंदा के मुँह से संस्कृत काव्य-पंक्तियों का उल्लेख किया है। ये काव्य-पंक्तियाँ कालिदास के "ऋतुसंहार" के छठे सर्ग (श्लोक-2) में है।

"द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं···सपं···स्त्रियः···सकामाः पवनः सुगन्धिः···
सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः···सर्वप्रिये चारुतरं वसन्ते···"[5]

इसमे संन्देह नही कि संस्कृत की काव्यपंक्तियाँ कालिदास की साहित्य-साधना की नान्दी ही कहा जा सकती है। कालिदास के साहित्य का प्रेरणास्त्रोत मुख्यतया उसकी पत्नी प्रियंगुमंजरी है। गुप्तकालीन सांस्कृतिक पार्श्वभूमि तथा प्रकृति-सुंदरी ही है।

"आठवाँ सर्ग" का प्रतिपाद्य

"आठवाँ सर्ग" के प्रतिपाद्य के बारे में कीर्तिभट्ट का मत बडा ही महत्वपूर्ण है। इस सर्ग में श्रृंगार-रस ही सर्वप्रमुख है। प्रियंवदा जब आँठवे सर्ग के बारे में कीर्तिभट्ट को पूछती है कि इस सर्ग में क्या है? तब कीर्तिभट्ट उसे बताता है-

> "इस सर्ग मैं वह है प्रियंवदे, कि युवक सुने तो उत्तेजित हो जाएँ और युवतियाँ सुने तो उन्मत्त। ···यह काव्य नही, मदिरा का मादक चषक है, सुन्दरी।"[6]

इसमें संदेह नहीं कि "कुमारसम्भव" महाकाव्य का आठवाँ सर्ग रसों का राजा श्रृंगार से ओतप्रोत है। जब सम्राट चन्द्रगुप्त कालिदास की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि कालिदास की रचना में {आठवाँ सर्ग} अपने आराध्य को लेकर उद्दाम श्रृंगार की रचना की गयी है। तब कालिदास सम्राट चन्द्रगुप्त के सम्मुख कहता है कि महादेव केवल देवों के अधिदेव ही नहीं है वे रस के अधिराज भी हैं। "कुमारसम्भव" में महादेव के दोनों रूपों को प्रतिष्ठित किया गया है कि स्त्री-पुरूष संबंध में ही भावना की गहराई और सघनता अधिक होती है। और इसी कारण ही काव्य में श्रृंगार रस को रसों का राजा कहा गया है। यहाँ कालिदास यह भी कहता है कि अगर उमा महादेव के प्रणय-प्रसंग पर किसी को आपत्ति होती है तो उसे पुरूष और प्रकृति के मिलन का प्रतीक माना जा सकता है।[7]

संयोग-श्रृंगार की उद्दाम अभिव्यक्ति

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "प्रियंगुमंजरी के रूप सौन्दर्य का मार्मिक वर्णन किया है -

"हंसगति-देहलता, मुखचन्द्र-धनुषभ्रू,अधरपल्लव-मृग नैन···"[8]

इस सौन्दर्य वर्णन के पश्चात् प्रियंवदा के मुँह से कालिदास और प्रियंगुमंजरी के अभिसार मिलन का उत्तान और उद्दाम वर्णन करके आठवें सर्ग में चित्रित शृंगार को संकेतित किया है।

प्रियंवदा : देह का अंगराग···माथे का तिलक···आँखों का अंजन···अधरों का लाक्षारस ···कपोलों के विशेषक···वक्ष के पत्रभंग····सब मिटे या अधमिटे हैं।

अनसूया : भला क्यों कर ?

प्रियंवदा : कुछ को व्यग्र स्पर्शों ने सोख लिया। कुछ अलिंगन की तरंगों में विलीन हुए। रहे-सहे तप्त चुंबनों में झुलस गये।

अनसूया : च्चच्च···च्चच्च···।

प्रियंवदा : कुछ पास जाना, तो देखोगी कि उनकी देह पर कितने ही दंतक्षत और नखविन्यास हैं। इसलिए उन्होंने आज हम लोगों को अपने पास से हटा दिया है। ····जानती हो, कहाँ-कहाँ ?"[9]

"आठवाँ सर्ग" : रचना-प्रक्रिया

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" के प्रथम अंक के कालिदास विरचित "कुमारसम्भव" महाकाव्य के विवाद्य "आठवाँ सर्ग" की रचना प्रक्रिया के बारे में कालिदास के सेवक कीर्तिभट्ट के माध्यम से व्यक्त किया है।

1· 'आठवाँ सर्ग' की रचना उज्जयिनी की कोलाहल से पच्चास कोस की दूरी पर शिप्रा नदी के तट पर एक कुटी में हुई है।

2· उस कुटी में कालिदास ने एक मास निवास किया था। प्रारंभ के एक सप्ताह तो कविवर कालिदास ने एक शब्द भी नहीं लिखा। "कुमारसम्भव" के पहले सात सर्ग बैठे बैठे पढते रहे। कोरे भोजपत्र को देखते रहे। आपानक भोजन की ओर उनका ध्यान नहीं था। कुटीर से बाहर निकलकर उपवन, वन देखते रहते थे। सुबह उषा की लाली सायंकाल की सुषमा और आधी रात को चाँदनी

में सौंदर्य देखते थे। इसप्रकार कालिदास ने एक सप्ताह में केवल चिंतन, मनन और निरीक्षण का कार्य किया। श्रेष्ठ कवि की रचना प्रक्रिया में इस प्रकार का चिंतन, मनन, निरीक्षण और एकान्त की आवश्यकता होती है। इन बातों को नाटककार ने कीर्तिभट्ट के माध्यम से अच्छी तरह से बतलाया है।

अगले तीन सप्ताह में कालिदास ने "आठवाँ सर्ग" की रचना पूरी की है, इतना ही नही उज्जयिनी वापस लौटने के पहले तीन दिन कालिदास ने 'आठवाँ सर्ग' के प्रत्येक श्लोक और उसमें निहित पंक्तियों, शब्दों और अक्षरों को कंठस्थ किया और अपने सेवक कीर्तिभट्ट को सुनाया।

कालिदास ने "आठवाँ सर्ग" का सस्वर, पाठ भी अपने सेवक को सुनाया। सस्वर पठन में आरोह, अवरोह, समतल कहाँ हो इस पर भी अपना ध्यान केंद्रित किया।[10]

कुमारसम्भव की अपूर्णता

साहित्य और राजनीति तथा समाजनीति का घनिष्ट संबंध होता है यद्यपि कोई भी रचना कलाकार की आत्माभिव्यक्ति का उन्मेश है फिर भी उस कलाकृति का बुरा प्रभाव किसी पर न पडे और वह कला, कलाकार, उसकी प्रतिभा आदि का प्रचार, प्रसार, केवल किसी राज्य में नहीं, सारे विश्व में हो, यही साहित्यकार का दायित्व है। इस दृष्टि से अगर रचना की जाती है, तो उस साहित्य का मूल्य निश्चय ही बढ जाता है। समाज और राजनीति में किसी भी प्रकार आतंक फैलाने की संभावना हो सकती है। अगर ये आतंक फैल जायेगा तो सम्राट कालिदास को निष्कासित भी कर सकता है। सम्राट चन्द्रगुप्त के इस विचार पर कालिदास सोचता है, अपने निष्कासित होने के डर से नहीं बल्कि अपनी कलाकृति से समाज में आतंक न फैले इसलिए कालिदास "कुमारसम्भव" को अधूरा छोड देने के लिए तैय्यार होता है और "आठवें सर्ग" के आगे कुछ नहीं लिखना चाहता है और आपत्ति से बचने का प्रयास करता है। कालिदास के शब्दों में - "कुमारसम्भव" को मैं अधूरा ही छोड दूँगा। आठवे सर्ग पर···आगे नही लिखूँगा। इस रचना को एक प्रकार से भूला ही दूँगा। यह कभी मेरे घर से बाहर नहीं निकलेगी। किसी गोष्टी में इसका पाठ नहीं होगा। किसी तक इसकी प्रतिलिपि नहीं पहुँचेगी। ···इतने से लोग सन्तुष्ट हो जाएँगे ? फिर तो किसी को आपत्ति नहीं होगी ?"[11]

कालिदास यह भी कहता है कि - "कई बार श्रम व्यर्थ भी तो हो जाता है।···समझ लूँगा कि कुमार का जन्म सम्भव नहीं हुआ, गर्भ में ही उसकी हत्या हो गयी।···तारक जीवित है, तो रहे। मुझे क्या ?"[12]

"आठवाँ सर्ग" का पाठ - पूर्वाभ्यास

आमतौर पर कालिदास का आविर्भाव गुप्तकाल में हुआ था, ऐसा मानने वाले अनेक विद्वान है। इसका विवेचन "अध्याय : 1" में किया गया है। गुप्तकाल को भारत का स्वर्णयुग कहा जाता है। इस स्वर्णयुग में संस्कृत राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई थी। और कालिदास जैसे सर्वश्रेष्ठ संस्कृत कवि का जन्म हुआ था। इस स्वर्णयुग में ही संस्कृत भाषा इतनी प्रतिष्ठित हो गयी थी कि काव्य या नाटक के पाठ संगोष्ठियों में प्रस्तुत किये जाते थे। हमारे विवेच्य नाटक में संस्कृत महाकवि और नाटककार कालिदास के "कुमारसम्भव" महाकाव्य में आठवें सर्ग से सम्बन्धित पाठ का पूर्वाभ्यास तथा संगोष्ठी में वाचन आदि का उल्लेख नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने बड़ी कुशलता से किया है।

मित्र-संगोष्ठी

"आठवाँ सर्ग" नाटक में काव्य-पाठ चर्चा के बारे में मित्र-संगोष्ठी पर भी प्रकाश डाला गया है।

आर्य सौमित्र कालिदास का मित्र माना जाता हे। उसके आग्रह के कारण उसके भवन पर कालिदास के "आठवाँ सर्ग" पर एक मित्र-गोष्ठी आयोजित की जाती है। उसमें सौमित्र कालिदास दिङ्नाग आदि साहित्य के मर्मज्ञ उपस्थित रहते हैं। यह गोष्ठी एक घरेलू गोष्ठी ही रही है। इस गोष्ठी में चर्चा के दौरान दिङ्नाग यह बताता है कि कालिदास ने "कुमारसम्भव" के पहले सर्ग में लिखा है कि शुद्ध भाषा से विद्वान की शोभा बढती है और आठवाँ सर्ग के कुछ श्लोकों के बाद एक अशुद्धि दिखाई देती है।

इसप्रकार चली हुई चर्चा मे कालिदास की ओर से उसका मित्र सौमित्र कहता है कि रचनाकार की भाषा विशिष्ट होती है। और उसके साहित्य में कुछ

व्याकरणिक दोष भी दिखाई देते हैं। इस संदर्भ में सौमित्र कहता है कि अश्वघोष भास और आर्यशुर की जातक माला में ऐसे अनेक प्रयोग मिलते हैं। आगे सौमित्र यह भी कहता है कि रचनाकार हमेशा व्याकरण के नियमों से बंधा हुआ व्यक्ति नहीं रहता है , बल्कि अपनी दृष्टि के अनुसार वह भाषा को संजोता हैं - "रचनाकार कभी वैयाकरणों की कट्टरता से नहीं बँधता, बल्कि अपनी दृष्टि से भाषा को संस्कार देता है।"[13]

राज-संगोष्ठी

गुप्तकाल में साहित्यकार के साहित्य का पाठ राजगोष्ठियों में किया जाता था। नाटक्कार सुरेन्द्र वर्मा ने कालिदास के "कुमारसम्भव" के "आठवाँ सर्ग" के पूर्वाभ्यास का वर्णन राजदुहिता और कालिदास की पत्नी प्रियंगुमंजरी के आग्रह पर इस तरह बताया है। प्रियंगुमंजरी कालिदास से कहती है कल होने वाले नये सर्ग के पाठ को आप किस तरह प्रस्तुत करेंगे ? उसके आग्रह पर कालिदास प्रस्तुत करता है।

राजसभा मंडप में और राज्य के आसन पर बैठे हुए लोगों को संबोधित करते हुए कालिदास नये सर्ग के बारे में अपने विचार प्रस्तुत करता है। संबोधन का एक विशिष्ट तरीका होता है, जिसमें मान-सम्मान, आदर आदि बातें आप ही आप दिखाई पडती है। कालिदास द्वारा प्रस्तुत संबोधन का यह रूप देखिए - "महामहिम सम्राट।...सेनापति। राजपुरोहित। धर्माध्यक्ष। महादंडनायक। मंत्रीपरिषद के सदस्यगण। और काव्यरसिकों। {उसी प्रवाह में} प्रियंगुमंजरी, हँसो मत।[14]

तत्पश्चात कालिदास यह कहता है कि "कुमारसम्भव"के सात सर्गों का पाठ उसने अलग अलग राजगोष्ठियों में किया है। किन्तु पहले सात सर्गो पर, संक्षिप्त विचार, कथावस्तु के बारे में, बतलाना उचित होगा। कालिदास कहता है "कुमारसम्भव" के पहले सर्ग में मैना और हिमालय नामक दम्पति के यहाँ उमा का जन्म होता है और कालान्तर में वह युवावस्था में पदार्पण करती है।

दूसरे सर्ग में "तारक" नामक राक्षस के अत्याचार का वर्णन किया गया है। और उसके वध की कथावस्तु अनुस्युत है।

तीसरे सर्ग में कामदेव का वर्णन है और महादेव की तीसरी आँख से निकली हुई आग से काम झुलसकर राख हो जाता है।

पाँचवे सर्ग में महादेव की प्राप्ति के लिए उमा की तपस्या और दोनों में प्रेम का उत्पन्न हो जाना दिखाया गया है।

छठे सर्ग में महादेव की ओर से उमा के साथ विवाह का प्रस्ताव है।

सातवे सर्ग में उमा और महादेव का ब्याह और तत्पश्चात आठवें सर्ग का पाठ पढ़ा जाता है।[15] यहाँ डॉ॰जयदेव तनेजा के विचार दृष्टव्य हैं -

"प्रथम सर्ग में, कालिदास को सम्मान समारोह के सभा मण्डप में आठवाँ सर्ग पढ़ने से पूर्व पूर्ववर्ती सात सर्गो का अत्यन्त संक्षिप्त वर्णन तथा भूमिका के तौर पर जो कुछ भी कहना है, उसे नाटककार ने पूर्वाभ्यास के बहाने से बड़ी कुशलता से अपने पाठक-दर्शक तक पहुँचा दिया है। इससे एक ओर यदि "आठवाँ सर्ग" का सही परिप्रेक्ष्य और सन्दर्भ मिलता है तो दूसरी ओर इस सम्पूर्ण तैयारी के वैषम्य में समारोह का न होना नाटकीय विडम्बना को और गहन बना देता है।" नाटकीय विडम्बना का प्रयोग नाटककार की निजी सूझ है।

कालिदास विरचित "कुमारसम्भव" के "आठवाँ सर्ग" पर उस समय के लोगों ने कुछ आपत्तियाँ उठायी होंगी ऐसा अनुमान किया जाता है। उस समय राज-गोष्ठियों में काव्य का पाठ कवि करता था और उस पर गोष्ठी में चर्चा भी की जाती थी।

राजदुहिता प्रियंगुमंजरी के आग्रह के कारण कालिदास उसे अपने शयनागार में ही आठवें सर्ग का पाठ सुनाता है। यह नाटककार की अपनी सूझ होगी। कालिदास की पत्नी प्रियंगुमंजरी कालिदास के पाठ पढते समय बीच-बीच में कुछ सुझाव करती थी और शृंगारवर्णन के बारे में आपत्तियाँ भी उठाती है।

जीवन में मोड और व्यवधान वाली पंक्ति को हटाने की सूचना प्रियंगुमंजरी करती है और कालिदास भी कृत्रिम गम्भीरता से "जैसे देवी की आज्ञा" कहता है।

तत्पश्चात प्रियंगुमंजरी कालिदास का ध्यान इकसठवें श्लोक की ओर आकृष्ट करती है और कहती है कालिदास ने अपनी पत्नी के नाम का उल्लेख किया है। प्रियंगुमंजरी के शब्दों में "यह उदित होता हुआ चन्द्रमा प्रियंगु के फल के समान लाल दिखलाई पड़ रहा है।····सारे संसार में बस, यही एक उपमा रह गयी थी····तुमने ऐसा क्यों किया ?"[16]

तत्पश्चपात कालिदास "आठवाँ सर्ग" ब्याह के बाद ही क्यों लिखा गया है इसका उत्तर देता है। कालिदास कहता है ब्याह से पहले उसे नवदम्पती के पारस्परिक व्यवहार का ज्ञान प्राप्त होनेपर ही उसने "आठवाँ सर्ग" लिखा है और इसीकारण इस सर्ग में अनुभूति की प्रखरता भी आ गयी है।

"रघुवंश" में श्रृंगारिकता

कालिदास की अनुपम काव्य-कृतियों में एक काव्यकृति रघुवंश है। रघुवंश का एक सर्ग इन्दुमती स्वयंवर वाला है। इस सर्ग में भी कवि की काव्य-प्रतिभा श्रृंगार से युक्त हुई। इन्दुमती स्वयंवर सर्ग में कीर्तिभट्ट के ये उद्गार देखिए - "इस सर्ग में वह है अनसूये, जिसक लिए युवा मन नटखट बछड़े-सा कुलांचे भरता है। यह काव्य नहीं, मनभावन मोदक है, सुन्दरी।"[17]

कालिदास की चरित्र सृष्टि और कीर्तिभट्ट का आत्मक्लेष

कालिदास के "अभिज्ञानशाकुन्तल" नाटक में अनसूया और प्रियंवदा नामक दो नारी पात्रों का अत्यंत उत्कट चरित्र अंकन किया है। और "अभिज्ञानशाकुन्तल" नाटक के ये दोनों पात्र नाटक की कीर्तिभट्ट के शब्दों में - "आज भारतवर्ष के कोने-कोने में अनसूया और प्रियंवदा का नाम जाना जाता है।6[18] लेकिन कीर्तिभट्ट उपेक्षित रहा है। कीर्तिभट्ट को उपेक्षित रखने के कुछ कारण यह है "विक्रमोर्वशीय" नाटक में इतिहास के अनुसार कालिदास ने माणवक पात्र का उल्लेख किया है और कीर्तिभट्ट को अनालिखित रखा गया है। "मेघदूत" की रचना में कीर्तिभट्ट को

स्थान नहीं मिला है।

यक्ष की ही व्यथा-गाथा चित्रित की गई है। यक्ष और यक्षिणी के मिलन और वियोग अनुभूतिजन्य हैं। कीर्तिभट्ट कुँवारा होने से उसे मेघदूत में उसकाअज-विलाप विशेष उल्लेखनीय हैं लेकिन कीतिभट्ट का जन्म रघुवंश मे हुआ ही नहीं है। यद्यपि कीतिभट्ट अपने नाम के लिए अपनी प्रसिद्धि के लिए तडपता रहता है फिर भी उसे विशेष प्रसिद्धि नही मिलती है।[19] उसका नाम विशेष रोशन नहीं होता है और बेचारा कीर्तिभट्ट आत्मक्लेष से आहत होता है। कीर्तिभट्ट नाम में कीर्ति भी है और वाक्चातुर्य तथा बुद्धिमत्ता भी है। लेकिन असल में इस नाम की क्षमता के उपरोध के रूप में कीर्तिभट्ट चरित्र की सृष्टि नाटककार कालिदास ने की है जो नाटक में विरोधाभास निर्माण करने मे सक्षम है। जहाँ अनसूया और प्रियंवदा जैसी परिचारिकाओं जैसी कीर्ति पताकाएँ फहराती रहती है वहाँ कीर्तिभट्ट जैसे पात्र के कीर्ति-प्रकाश में अंधकार जैसी छाया बनी रहती है। विरोधाभास जीवन की सच्चाई का ही एक दुर्लभ अंग है।

साहित्य और राजनीति

कोई भी साहित्यकार अपने देशकाल की विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक आदि से प्रभावित होता है और अपने साहित्य का सृजन करता है। किसी भी साहित्य पर युग-विशेष का गहरा प्रभाव पडता है। साहित्यकार साहित्य का सृष्टा है और उसका साहित्य युग-विशेष की पुकार है। साहित्य को प्रभावित करने वाले तत्वों में एक महत्वपूर्ण तत्व राजनीति है। किसी भी साहित्यकार को अपनी समय की राजनीति से गुजरना पडता है। उसकी साहित्य-यात्रा में उसके महत्वपूर्ण साहित्य के कारण कभी उसे सम्मान मिलता है तो कभी उसे भर्त्सना सुननी पडती है। कालिदास विरचित "कुमारसम्भव" महाकाव्य में यह बात सहज ही नजरआती है।

कालिदास के राजसम्मान का आयोजन

भारत के इतिहास में गुप्तकाल स्वर्णयुग कहलाता है। और इस युग में अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता था और उनमें नागरिकों

का उत्साह भी और बढ़ जाता था।

सम्राट चन्द्रगुप्त कालिदास विरचित "कुमारसम्भव" महाकाव्य रचना के उपलक्ष्य में उनका सम्मान करना चाहते थे। नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" नाटक में दिखाया है कि कालिदास के मान-सम्मान का आयोजन कामोत्सव के समय होने वाला है। इस समय पर राज्यसभा में कविवर कालिदास का काव्यपाठ होने वाला है और उस पर सम्राट चन्द्रगुप्त के द्वारा पट्टबन्ध सम्मान भी होने वाला है। इसप्रकार एक ही दिन एक ही साथ तीन त्यौहार संपन्न होने वाले हैं।[20]

राज-गोष्ठी में प्रियंगुमंजरी की अनुपस्थिति

प्रियंगुमंजरी कालिदास की धर्मपत्नी है। उसे अपने पति पर नाज है कि उसका पति सर्वश्रेष्ठ कवि है और राज्यसभा में "आठवाँ सर्ग" के काव्यपाठ के बाद उसका राजसम्मान भी होने वाला है। लेकिन कालिदास से पूर्वाभ्यास के रूप में आठवाँ सर्ग का काव्य-पाठ सुनने पर उसे विचित्र अनुभव महसूस होता है। वह कुछ अस्वस्थ हो जाती है। कालिदास से दृष्टि मिलने पर उदास-सी मुस्कुराती है और कहती है कि कालिदास का बड़ा सम्मान होगा। अधिकारी वर्ग उन पर खुश होकर उन पर पुष्पों की वर्षा करेगा। सारा सभामण्डप खुश होगा। लेकिन जिस व्यक्ति को इस समारोह से अधिक सुख होगा वही व्यक्ति समारोह में उपस्थित नहीं रह सकता है। वह कालिदास को संबोधित करती हुई कहती है - "इस उन्नत मस्तक पर सम्राट सवर्ण पट्ट बाँधेगे। राजपुरोहित मांगलिक श्लोक पढ़ेंगे। धर्माध्यक्ष पूजन के पुष्पों की वर्षा करेंगे। ···सभा मण्डप गूँज उठेगा करतल-ध्वनि से···लेकिन यह कैसी विडम्बना है कि जिस व्यक्ति को यह समारोह सबसे अधिक सुख देगा, वही उसमें सम्मिलित हो सकता···।[21]

अनुपस्थित रहने वाला व्यक्ति और कोई नहीं, स्वयं प्रियंगुमंजरी ही है।

कालिदास का राजगोष्ठी में प्रभाव

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने प्रियंगुमंजरी की परिचारिका अनसूया के मुँह से कालिदास के काव्य-पाठ का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है। प्रथमतः कविवर कालिदास अपना प्रारंभिक वक्तव्य देता है। फिर कथानक की संक्षिप्त रूपरेखा बताता है और तत्पश्चात काव्यपाठ का प्रारंभ करता है। काव्यपाठ के प्रारंभ करने पर सभा-मण्डप मे एकदम सन्नाटा आ जाता है। सब लोग एकदम मंत्रमुग्ध होकर पाठ सुनते हैं। सबकी आँखे कालिदास पर लगी रहती है। उनका मधुर स्वर और काव्यपंक्तियों की ध्वनियों का वितान बडा ही प्रभावी बन जाता है। सब सम्मोहित होते है, समय भी सम्मोहित होता है। अनसूया के शब्दों में - "श्लोक के बाद श्लोक और पृष्ठ के बाद पृष्ठ···जैसे समय भी एक कोने में सम्मोहन से बंधा खडा था···लेकिन जल्दी ही यह मायाजाल टूट गया।"[22]

साहित्य में श्लीलता और अश्लीलता का प्रश्न

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" में श्लीलता और अश्लीलता के बारे में जो मौलिक विचार व्यक्त किये हैं उनको यहाँ विवेचित-विश्लेषित करना हमारा कर्तव्य है। नाटक में प्रयुक्त कुछ बाते इस प्रकार हैं -

अश्लीलता और काम

इसमें संदेह नहीं कि प्राणी-मात्र की मूलभूत प्रवृत्तियों में एक प्रमुख प्रवृत्ति काम है। काम एक ऐसी प्रवृत्ति है जो मनुष्य को कमनीय वासना की ओर ले जाती है। काम का महत्व भी उल्लेखनीय है। काम की परिभाषा स्वरूप तथा महत्व पर कालिदास ने अपने विचार "आठवाँ सर्ग" नाटक में इसप्रकार व्यक्त किये हैं - "काम का सामान्य अर्थ तृष्णा है, पर भारतीय चिन्तन ने देवता का पद दिया है इसे···जो व्यक्ति को कमनीय वासना की ओर ले जाता है।···आसक्ति का उदय उसी के संयोग से होता है, इसलिए धर्म में भी बडी महिमा है इसकी···जीवन को कामना और मोह देने के कारण काम को कल्याणकर भी कहते हैं।[23]

काम और प्रकृति का अन्योन्य संबंध है। प्रकृति के विविध रूपों मे ऋतुराज वसन्त का विशेष महत्व है। वसंत ऋतु में प्रकृति का जो बहुत आकर्षक और उन्मादकारी रूप दिखाई देता है वह काम का उद्दीप्त करने में सहायक होता है। भारतीय संस्कृति की एक विशेषता यह रही है कि प्राचीन काल से आज तक वसन्तोत्सव या कामोत्सव अनेक जगह मनाया जाता है। कालिदासरचित "कुमारसम्भव" के "आठवाँ सर्ग" का राजगोष्ठी में हुआ पाठ वसंतोत्सव या मदनोत्सव के दिन ही हुआ है।

शिप्रा के आसपास के वसन्त ऋतुकालीन दृश्य की ओर आकृष्ट होने वाला कालिदास निश्चय ही प्रकृति-प्रेमी और श्रृंगारी कवि एक साथ दिखाई देता है। कालिदास के शब्दों में - "और इसका यह भुवनमोहक रूप···वसन्त इसका सखा·· कोयल इसकी वेतालिक···फूलों का धनुष···भौंरों की पाँत की डोरी···आम्र-मंजरियों के बाण····"[24] कविता रूपी कामिनी को प्रकृति रूपी भामिनी का वरदान प्राप्त होता है। प्रकृति प्रेमी कवि कालिदास प्रकृति के प्रांगण में रहकर ही काव्यरचना करता है जिसमें काम का स्वरूप प्रकट होता है। श्रृंगारी काव्य में प्राकृतिक सौन्दर्य का बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान रहता है जैसा कि कालिदास के "ऋतुसंहार","कुमारसम्भव" में दिखाई पडता है।

"आठवाँ सर्ग" अश्लील है

जब राजगोष्ठी में §आठवाँ सर्ग" में§ वर्णित शयनागार में उमा और महादेव का रति-क्रीडा का स्थल आ जाता है, तब कालिदास के काव्य पाठ के समय श्रोताओं की टीका-टिप्पणी शुरू होती है और नाटक में यह दर्शाया गया है कि उस सभा-मंडप में धर्मगुरू खडे होते हैं और गरजकर बोलते हैं कि "आठवाँ सर्ग" अत्यंत अश्लील है। जगत्-पिता महादेव और जगद्-जननी पार्वती के भोग-विलास का यह उद्दाम स्वच्छंद और नग्न चित्रण है, इसका रचयिता पापी है, इसके श्रोता पापी हैं।"[25]

राजसभा में उपस्थित, राजपुरोहित और धर्माध्यक्ष खडे होकर सम्राट से क्षमा माँगते हुए कहते हैं कि वे इस आयोजन में भाग नहीं लेंगे।

सभा में उपस्थित महादंड नायक कहता है कि "आठवाँ सर्ग" अत्यंत मर्यादाहीन है।

मंत्री परिषद के पाँच, छः वृद्ध सदस्य कहते हैं कि उनकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँची है।

व्यापारी संघ के प्रधान सोमदत्त कहते हैं कि यह सर्ग बहुत अश्लील है।

प्रा·विद्या भास्कर माँग करते हैं कि "कुमारसम्भव" पर प्रतिबंध लगाया जाए, क्योंकि कच्चे मस्तिष्कों पर इसका बुरा प्रभाव पडेगा।" [26]

"आठवाँ सर्ग" अश्लील नहीं है

"कुमारसम्भव" के "आठवाँ सर्ग" पर अश्लीलता के बारे में जैसे विपक्ष में पुराणपंथी दकियानुसी लोगों ने अपने विचार व्यक्त किये उसके बावजूद कालिदास के मित्र आर्य सौमित्र और नयी पीढी के आठ-दस रचनाकारों ने कालिदास के पक्ष में अपने विचार प्रस्तुत किये।

आर्य सौमित्र ऊँचे स्वर में कहते हैं कि आठवाँ सर्ग अश्लील नहीं है। पति-पत्नी के पारस्परिक संबंध मे अश्लीलता नहीं होती। वे यह भी कहते हैं कि अश्लीलता का आरोप करने वालों की दृष्टियों में हैं, उनकी आँखों मे हैं, उनके मन में हैं।

नयी पीढ़ी के आठ-दस रचनाकारों का कथन है कि पुरानी पीढ़ी को काव्य की समझ ही नहीं है। इनकी साहित्यिक चेतना तो वाल्मिकीय रामायण तक ही सीमित है। इन कट्टर पुराण पंथियों का हस्तक्षेप हम किसी भी प्रकार सहन नहीं करेंगे। [27]

अश्लीलता का प्रश्न और रोकथाम

"आठवाँ सर्ग" अश्लील है। इसलिए उस पर रोक-थाम या बन्दी लगायी जाय। इस तरह का प्रस्ताव शैव धर्म के अनुयायियों ने सभा-मंडप में रखा। शैव धर्म के अनुयायियों मे राजपुरोहित, धर्माध्यक्ष, महादंड नायक, वरिष्ठ मन्त्रीगण और

नगर के तमाम प्रभावशाली व्यक्ति मौजूद थे। स्वयं सम्राट चन्द्रगुप्त ने पुजारी महोदय से दीक्षा लेकर उन्हें धर्मगुरू की उपाधि प्रदान की थी और इसीकारण सम्राट धर्मगुरू का बहुत सम्मान भी करते हैं। "आठवाँ सर्ग" को अश्लील मानने वालों में मुख्यतया शैव-धर्म के अनुयायी ही रहे हैं।

राजगोष्ठी में "आठवाँ सर्ग" पर श्लीलता-अश्लीलता के बारे में जो बडी बहस हुई उसमे शैव संप्रदाय के महानुभावों ने "आठवे सर्ग" पर अश्लीलता का आरोप लगाया। और थोडे-से नये रचनाकारों ने अश्लीलता नहीं है, ऐसा कहा।

कवि-सम्मान की योजना का स्थगन

आठवें सर्ग पर विपक्ष और पक्ष में हुए बहस को देखते हुए सम्राट चन्द्रगुप्त ने सम्मान आयोजन के स्थगन की घोषणा की।[29] फिर दोनों दलों के चुने हुए लोगों के साथ वे भीतरी कक्ष में चले गए। सभा-मण्डप में वाद-विवाद के कारण आयी अव्यवस्था से कालिदास ने उस स्थल से चुपचाप प्रस्थान किया।

न्यायसमिति का गठन

कालिदास विरचित "कुमारसम्भव" महाकाव्य का "आठवाँ सर्ग" अश्लील है या नहीं इस प्रश्न पर विचार करने के लिए एक न्यायसमिति बनाई जाती है। इस न्यायसमिति का जो वर्णन नाटककार ने किया है वह आज की साहित्यिक चर्चा विषयक न्यायसमिति पर किया गया व्यंग्य ही है। नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने यह दर्शाया है कि इस नाट्यसमिति मे जो सदस्य हैं वे मुख्यतया काव्य की सही जानकारी जानेवाले उसकी सुयोग्य समीक्षा करने वाले और काव्य की आत्मा तक न पहुँचने वाले लोगों की बनाई गयी है। इस न्यायसमिति के एक सदस्य उज्जयिनी के सम्पन्न व्यवसायी श्री·दिवाकर दत्त हैं जिनकी आभूषणों की बड़ी दूकान है।

अर्थात यह स्पष्ट है कि समिति के यह सदस्य स्वर्ण की परख अच्छी तरह से कर सकते हैं पर काव्य की परख नहीं कर सकते। ऐसे व्यक्ति काव्यकृति के अश्लीलता की जाँच नहीं कर सकते हैं।

न्यायसमिति के दूसरे सदस्य उज्जयिनी के विख्यात आयुर्वेदाचार्य श्री·पुंडरीक हैं। कालिदास के अनुसार ये आयुर्वेदाचार्य मुख्यतया ज्वर के प्रकार जाननेवाले, टूटी हड्डी को जोडने वाले, चरबी घटाने का इलाज बताने वाले अर्थात मानव शरीर के पूरे जानकार हैं। इसलिए वे मानवीय मनोभावों के भी विशेषज्ञ होंगे। यहाँ कालिदास ने मानवीय "मनोभावों के विशेषज्ञ" शब्द पर व्यंग्य किया है और संकेत किया है कि आयुर्वेदाचार्य मानव शरीर के जानकार हो सकते हैं। लेकिन उनके मानवीय मनोभावों के विशेषज्ञ होने पर संदेह किया जा सकता है।

इस न्यायसमिति के अध्यक्ष प्रधान अधिकरणिक हैं। नाटक का एक पात्र धर्माध्यक्ष के अनुसार यह सदस्य संसार की असारता, माया-मोह का बंधन, जन्म और जीवन, मरण और मोक्ष, आदि पर चर्चा करते हैं। अर्थात समिति के अध्यक्ष विवाह और प्रेम या प्रेम और विवाह के बारे में अनभिज्ञ हैं इसमे कोई संदेह नहीं।

समिति के चौथे सदस्य कालिदास के मित्र आर्य सौमित्र है।

न्यायसमिति के पाँचवे सदस्य पदेन सदस्य हैं, और वे हैं धर्माध्यक्ष। श्लीलता और अश्लीलता के विवाद में नैतिक और धार्मिक बाते आ जाती है और इसलिए धर्माध्यक्ष का कथन है कि वे उनके कार्यक्षेत्र में आ जाती है।[30]

न्यायसमिति के सदस्यों का ब्यौरा देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि अकेले सौमित्र को छोडकर अन्य चार सदस्य काव्य के क्षेत्र के सही जानकार और मर्मज्ञ नहीं हैं। अर्थात नाटककार ने यह संकेत किया है कि यद्यपि किसी कवि के सम्मान के लिए उसके काव्य का पाठ भले ही संगोष्ठी में पढ़ा जाता है लेकिन उस समिति के सदस्य ज्यादातर काव्यक्षेत्र के बाहर होते हैं और इसीकारण इस प्रकार की न्यायसमिति हास्यास्पद बन जाती है।

अन्धी न्याय समिति

कालिदास रचित "कुमारसम्भव" काव्य का आठवाँ सर्ग अश्लील है या नहीं इस पर विचार करने के लिए जो न्यायसमिति नियुक्त की गई है उस समिति के

सदस्यों में इस बात को लेकर मतभेद हैं कि उस बैठक में नागरिकों की मनाही हो या नहीं। इस संदर्भ में कवि के नाते कालिदास की सम्मति आवश्यक मानी जाती है। तब कालिदास कहता है कि - "समिती की बैठकें चाहे नगर के बीचों-बीच भीड़-भरे चौराहे पर हों और चाहे नगर के बाहर सुनसान वन में···मेरे लिए कोई अन्तर नहीं पडता।

कालिदास के इस वक्तव्य में उसका स्वाभिमान और अपनी कला के प्रति पूरा विश्वास सहज ही नजर आता है।

"कुमारसम्भव" का "आठवाँ सर्ग" अश्लील है या नहीं इस पर विचार विमर्श करने के लिए सम्राट चन्द्रगुपत द्वारा जो न्याय समिती बनायी जाती है उसके सदस्य कविकर्म जाननेवाले नही हैं। काव्य, रस आदि को जानने की क्षमता उनमें नहीं है और इसी कारण सम्राट चन्द्रगुप्त के सामने उस न्याय समिती पर कठोर व्यंग्य करता है। यद्यपि सम्राट चन्द्रगुप्त साहित्य और कला के प्रति रूचि लेने वाले और अपने राज्य मे साहित्य और कला की समृद्धि हो ऐसा माननेवाले सम्राट हैं। कालिदास के शब्दों में -"जिन्हें यह तक मालूम नहीं कि रस कौनसे खेत की मूली है, आश्रय किसे कहते हैं और आलम्बन क्या होता है, वे मरे काव्य पर मनमाने आरोपों की वर्षा करें ? दिन-दहाड़े बिना किसी अधिकार के साहित्योद्यान में घुस आयें और वर्षा के श्रम के बाद फले-फूले गुल्मों को उन्मत्त साँडो की तरह मसलें-कुचलें, रौंदे ? उस सम्राट के सामने, जो अपने को सहृदय कहता है ? और जिसे सारे कलाकार वैसा समझने का भ्रम पाले हैं। डॉ·राजशेखर शर्मा के शब्दों में - "साहित्येत्तर व्यक्तियों का समिति में रखा जाना व्यंग्यपूर्ण होते हुए भी आज की स्थिति और परिवेश पर एक गहरी चोंट है।"[32]

सम्राट चन्द्रगुप्त की विवशता

सम्राट चन्द्रगुप्त कला और साहित्य के पारखी हैं। वे कलानुरागी और कालिदास पर अन्याय हुआ है, ऐसी उनकी धारणा है। लेकिन एक राजनीतिज्ञ होने के कारण तथा सत्ता को सुरक्षित रखने के लिए वे न्यायसमिती के बारे में कुछ बोलना नहीं

चाहते हैं और कालिदास के प्रति सहानुभूति रखते हुए भी कुछ स्वतंत्र कार्यवाही नहीं कर पाते हैं। सम्राट चन्द्रगुप्त की यही विवशता है और यही विवशता वे कालिदास के सम्मुख प्रकट करते हैं - "अगर वह सम्राट चन्द्रगुप्त अपने हाथ में बनाए रखना चाहते हैं तो ···अगर वह अपने विरूद्ध असंतोष के विषैले बीज नहीं बोना चाहता है, तो···अगर वह महत्वाकांक्षियों को अवसर नहीं देना चाहता है, तो ····जानते हो, इस देश के लोगों को सबसे अधिक चोट कब पहुँचती है ? जब उनके धार्मिक क्रिया-कलापों मान्यताओं को आघात लगता है।"[33] सम्राट चन्द्रगुप्त की विवशता उनके शब्दों में देखी जा सकती है। सम्राट चन्द्रगुप्त के शब्दों में - "मैं बिलकुल असहाय हूँ, मेरे हाथ बँधे हुए हैं, क्योंकि आरोप लगाने वालों के शरीरों पर धर्म का अभेद कवच है।"[34]

इसमें संदेह नही कि नाटक के दूसरे अंक के अंत में सम्राट चन्द्रगुप्त स्वयं स्वीकार करते हैं कि यह उनकी विवशता है, परिस्थितियों के दबाव का परिणाम है।

राजनीति और रचनाधर्मिता

कालिदास ने अपने विवाह के उपरान्त ही एक मास उज्जयिनी से बाहर जाकर शिप्रा नदी के तट पर एक कुटी में आठवें सर्ग की रचना की है और अपने विवाह के बाद तुरंत ही युवावस्था में यह रचना की जाने के कारण उसमें उद्दाम, शृंगार का चित्रण किया है। आठवें सर्ग में प्रणय-क्रीडा का जो वर्णन किया गया है, वह वास्तव में रचनाकार की रचनाधर्मिता का ही प्रतिफलन है। बल्कि नागरिकों की भावनाओं को भी समझ लेना रचनाकार का दायित्व है।

अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य और राजनीति

यद्यपि साहित्य का सृजन साहित्यकार की आत्माभिव्यक्ति है। फिर भी उसका संबंध समाज और राजनीति से भी होता है। कालिदास के आठवाँ सर्ग को अश्लील माननेवालों में ज्यादातर अधिकारी वर्ग राजनीतिज्ञ है। साहित्यकार की साहित्य-साधना

को प्रतिभा को प्रतिष्ठापित करने में राजनीतिज्ञों का भी योगदान रहता है। अतः आठवाँ सर्ग नाटक मे यह दर्शाया गया है कि कालिदास की काव्यकृति, कालिदास की आत्माभिव्यक्ति का सुचारू रूप है फिर भी राजनीतिज्ञ उसे अश्लील मानते हैं। इसपर भी सोचना आवश्यक है। धर्मगुरू इस संदर्भ में केवल अश्लीलता की घोषणा से संतुष्ट नहीं हो सकते हैं। बल्कि वे कालिदास को दण्ड मिलने के पक्ष में भी हैं और अगर ऐसा न हो तो वे राजप्रासाद के सामने आमरण अनशन पर उतर जाने के लिए भी तैयार है और इसका नतीजा राज्य में भूचाल आ सकता हे। गुप्त साम्राज्य के विरूद्ध आस-पास के राजाओं के साथ मिलकर एकसंघ बनाया जा सकता है और गुप्त साम्राज्य के खिलाफ विद्रोह मचाया जा सकता है। [35]

विवाह की समस्या और राजनीति

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" नाटक में कालिदास और प्रियंगुमंजरी के विवाह की समस्या के प्रति संकेत किया है। इस विवाह की मुख्य समस्या यह है कि कालिदास ब्राह्मण है और प्रियंगुमंजरी क्षत्रिय है। दो जातियों के बीच हुए इस विवाह से ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों असंतुष्ट है। और इसीकारण गुप्त साम्राज्य पर दूसरे राज्य का अतिक्रमण भी हो सकता है।

इसमें संदेह नहीं कि कविवर कालिदास ब्राह्मण है और राजदुहिता विदुषी प्रियंगुमंजरी क्षत्रिय है और यह विवाह आंतरजातीय विवाह होने के कारण राज्य में अराजकता फैल सकती है। कहने का आशय यह है कि यद्यपि कवि की आत्माभिव्यक्ति को महत्वूपर्ण स्थान है। लेकिन जिस समाज में कवि निवास करता है उस समाज की भावना को ठेंस न पहुँचे, इसप्रकार की कलाकृति निर्माण करना कवि का फर्ज होना चाहिए।

इसप्रकार की आत्माभिव्यक्ति शासन के लिए एक संकट बन जाती है इसे कवि को नहीं भूलना चाहिए। सम्राट चन्द्रगुप्त के शब्दों में - "अगर कोई यह सोचे कि वह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर शांति और व्यवस्था भंग कर सकता है, शासन के स्थायित्व के लिए संकट बन सकता है, तो यह उसकी बहुत बडी भूल होगी - इस भूल का मूल्य उसे चुकाना होगा।" [36]

चन्द्रगुप्त का सुझाव और कालिदास का आग्रह

सम्राट चन्द्रगुप्त के राज्य के धर्मगुरू, धर्माध्यक्ष, राजपुरोहित आदि महानुभावों को "आठवाँ सर्ग" अश्लील लगता है। अतः सम्राट चन्द्रगुप्त कालिदास को यह सुझाते हैं कि "आठवाँ सर्ग" प्रारंभ होने पर एक पंक्ति में यह लिखा जाये कि विवाह के बाद उमा और महादेव के यहाँ यथासमय कार्तिकेय का जन्म होता है और सारी विलास-क्रीडा को हटा देना चाहिए।[37]

कालिदास इस सुझाव को नहीं स्वीकारता है। कालिदास का यह कथन है कि "सातवाँ सर्ग" नायक और नायिका के ब्याह से समाप्त होता है और आठवें सर्ग की पहली पंक्ति में पुत्र का प्रादुर्भाव लिखना एकदम उचित नहीं है। नौ महीने नवदम्पति कहाँ रहे, कैसे रहे ? उनके जीवन की रूपरेखा क्या थी ? उनके स्वप्न क्या थे ? उनके तन-मन का सुख क्या था ? उनके विवाह-बंधन का स्थायीभाव क्या था ? आदि प्रक्रिया को काव्य में व्यक्त किया गया है, उचित ही है। इससे कथा का सौन्दर्य बढ सकता है। ब्याह के बाद पुत्रोत्पत्ति का तुरन्त प्रसंग एक वाक्य मे लिखना कलात्मक दोष बन सकता है। और इसप्रकार के दोष से काव्य के समग्र प्रभाव को ठेंस पहुँच सकती है। और कालिदास के नाम के साथ "कुमारसम्भव" एक भयंकर कलंक बनकर जुड जा सकता है।[38]

सम्राट चन्द्रगुप्त के सुझाव को कालिदास इसलिए ठुकराता है कि साहित्यकार की सृजनशीलता को सर्वाधिक महत्व देना चाहिए। साहित्यकार की सृजनशीलता स्वतंत्र होनी चाहिए।

सम्राट चन्द्रगुप्त के सुझाव वास्तव में कालिदास की सृजनशीलता पर दबाव डालने वाले हैं। सृजनशीलता स्वतंत्र अनुभव है। रचनाकार को हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है। देवेन्द्रनाथ इस्सर के शब्दों में - "कोई भी राज्य कितना भी उदार क्यो न हो, साहित्यकार की रचनाओं में व्यक्त विचारों के आधार पर उसकी स्वतंत्रता पर प्रतिबंध के लिए जनमत, देशभक्ति और लोकहित आदि के तर्क किये जाते हैं। राज्य अपने अधिकारों की प्रतिष्ठा स्थापित करता है। साहित्य सदैव प्राधिकार और स्वतंत्रता का युद्धक्षेत्र रहा है।"[39]

न्यायसमिति के निर्णय का संकेत

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने धर्माध्यक्ष के मुँह से न्यायसमिति के निर्णय पर प्रकाश डालते हुए यह संकेत दिया है कि अगर न्यायसमिति अश्लीलता का निर्णय करेगी तो "आठवाँ सर्ग" अवैध वस्तु माना जायेगा। उस पर कुछ बंधन लग जायेंगे।

"कुमारसम्भव"पर कुछ बन्धन लग जाएँगे। "कुमारसम्भव" पर कुछ बन्धन लग जाएँगे अर्थात् समिति के निर्णय के अनुसार "इस काव्य का कभी किसी सभा या गोष्ठी में पाठ न हो। राजकीय प्रतिलिपि कार्यालय में इसकी प्रतिलिपियाँ तैय्यार न की जाएँ, इसका विक्रय न हो और जिस नागरिक के यहाँ भी प्रति पाई जाए, उसे नियमानुसार दंड मिले····"[40] इस सिलसिले में डॉ·जयदेव तनेजा के विचार समीचीन हैं -

"समसामयिक सन्दर्भो के लिए नाटककार ने न्यायसमिति और उसके निर्णयों को की आय के सेन्सर बोर्ड के समानान्तर प्रस्तुत किया है तो साहित्यिक राजनीति मे नई-पुरानी पीढ़ी की समझ और उनके पारस्परिक संघर्ष में भी आज की प्रतिध्वनि स्पष्टतः सुनी जा सकती है।[41]

अश्लीलता के बारे में आधुनिक विचार

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" नाटक में साहित्य में श्लीलता और अश्लीलता के प्रश्न को बडे मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। वस्तुतः यह एक सनातन ही रहा है। कालिदास के समय मे भी यह प्रश्न उपस्थित रहा है। क्योंकि यह स्पष्टतया दिखाई देता है कि "कुमारसम्भव" के आठ सर्ग ही प्रामाणिक माने गये हैं। और अन्य सर्ग प्रक्षिप्त हैं। कहा जाता है कि कालिदास विरचित "कुमारसम्भव" का "आठवाँ सर्ग" का पाठ राजगोष्ठी में प्रस्तुत होने पर उस पर टीका-टिप्पणी हो गयी और अश्लीलता के प्रश्न को अधिक महत्व देने के कारण महाकवि कालिदास ने वह काव्य अधूरा ही छोड दिया।

आज स्वातंत्र्योत्तर काल में भी साहित्य में श्लीलता-अश्लीलता का प्रश्न सबके सामने खडा है। विशेषतः साहित्य में अश्लीलता के बारे में आधुनिक साहित्यकारों

और समीक्षकों ने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं जो इस संदर्भ में प्रासंगिक रूप मे उद्धृत करना उचित होगा।

हैवेलाक ऐलिस ने रिवेल्यूएशन ऑफ आबसीनिटी" में लिखा है - "अश्लीलता मनुष्य के सामाजिक जीवन की स्थायी वस्तु है और मानव की गहन कामनाओं के अनुकूल है। अश्लीलता प्रत्येक समाज में कायम रहेगी। क्योंकि उसका उचित और प्राकृतिक आधार है। लेकिन अश्लीलता की मूर्खतापूर्ण और बाजारी किस्म, जिसे पोर्नोग्राफी कहते हैं, का आधार वेश्यागृहों और उसके कुत्सित समाज का स्थान्नापन्न है, प्रकृति नहीं बल्कि कृत्रिम गोपन है।"[42]

विख्यात साहित्यकार और दार्शनिक जैनेंद्रकुमार के अनुसार - "अश्लील प्रकृत नहीं है, अप्राकृतिक है। अर्थात् अश्लील वस्तु के साथ नही है, कृत्य के साथ नहीं है वह असत्य के और छल के साथ है। प्रकृत आचरण अश्लील कैसे हो सकता है। पर सभ्य लगने वाला आचरण भी अश्लील हो जाता है, जब उसकी असत्यता उघड़ी और प्रगट दीख आती है।"[43]

"साहित्य और जीवन में सेक्स का सत्कार आवश्यक है। जिस साहित्य में सेक्स का सत्कार नहीं, और यौनवृत्ति को उत्तेजित करने के लिए सेक्स का वर्णन किया जाता है या उसे यौनतुष्टि के स्थानापन्न के रूप में प्रस्तुत करके पाठक के आत्मतुष्टि की ओर अग्रसर किया जाता है निःसंदेह अश्लील है। ऐसा साहित्य सेक्स का अनादर करता है, उसे तुच्छ और मलिन समझकर उसका तिरस्कार करता है।"[44]

यहाँ इतना जरूर कहा जा सकता है कि साहित्य में श्लीलता और अश्लीलता का प्रश्न समीक्षकों की दृष्टिभेद का एक प्रमुख कारण है। साथ ही साथ स्त्री और पुरूष की प्रकृति का मानवीय संबंध विशेषतः पति-पत्नी का संयोग अश्लील नहीं कहा जा सकता है।

साहित्यकार की आत्माभिव्यक्ति का प्रश्न

"आठवाँ सर्ग" मे जो नवदम्पति के अंतरंग जीवन का खुलकर वर्णन कालिदास ने किया है, उस पर प्रियंगुमंजरी यह आपत्ती उठाती है कि कालिदास के पाठ पढते समय श्रोता जैसे दर्शक बनकर पति-पत्नी की उन्मुक्त प्रणय-लीला देखेंगे और प्रियंगुमंजरी को लज्जित होना पडेगा। उसका सिर इस समय झुका रहेगा और श्रोताओं की नजरे प्रियंगुमंजरी के ऊपर लगी रहेगी।

नवदम्पति के अनंतराग का यह वर्णन अत्यंत उन्मादक है। इसप्रकार की आपत्ति प्रियंगुमंजरी उठाती हे और कुछ गुस्से मे आकर यह भी कहती है कि धरती फटे ओर मैं उसमें समा जाऊँ। प्रियंगुमंजरी के शब्दों मैं - "तुम पन्ने पर पन्ने पलटते जाओगे और श्रोता जैसे दर्शक बनकर पति-पत्नी की उन्मुक्त प्रणय-लीला देखेगे····यौवन के उष्ण रक्त में ज्वार आने के चित्र····उत्तेजना और उन्माद और तृप्ति के आरोहावरोह····दो शरीरों के एक दूसरे में समा जाने के दृश्य···मैं वही बैठी रहूंगी···चुपचाप सिर झुकाए···पलक उठाकर किसी ओर देख नहीं सकूँगी और हर पल, हर क्षण कचोटती रहेगी यह बात कि तमाम आँखे मेरे ही ऊपर लगी हुई हैं। मुझको ही देखते हुए अनेक अधरों पर सूक्ष्म मुस्कान आ गयी है और मुझे ही लेकर अनेक दृष्टियों मे गोपनीय संकेतों का आदान-प्रदान हुआ है।···हर श्लोक के बाद मेरे माथे पर स्वेद-बिंदु उभरते नजर आएँगे, हर श्लोक के बाद मेरा हृदय-स्पन्दन बढ़ता जाएगा···और जब तुम "इति उमासुरतवर्णन नामाष्टमः सर्गः····कहकर अन्तिम पृष्ठ नीचे रखोगे, तो मेरी यह दशा होगी कि बस, धरती फटे और मैं उसमें समा जाऊँ····· [45]

इससे स्पष्ट है कि कालिदास ने "आठवाँ सर्ग" की रचना अपने ब्याह के बाद की है। उमा और महादेव की जो उन्मुक्त प्रणय-लीलाएँ शब्दांकित की हैं। वह वास्तव में कालिदास के नवदम्पति जीवन की ही उन्मादक अभिव्यक्ति है। काव्य में आत्माभिव्यक्ति का जो उल्लेख समीक्षकों ने किया है उसकी याद यहाँ आ जाती है।

रचनाकार और गोपनीयता

कालिदास के आठवें सर्ग पर प्रियंगुमंजरी ने यह आपत्ति उठायी है कि किसी रचनाकार को पति-पत्नी के संदर्भ में गोपनीय बातों को अभिव्यक्त नहीं करना चाहिए। लेकिन कालिदास ने प्रियंगुमंजरी के साथ विवाह करने पर आठवें सर्ग में उमा के रूप में जो प्रस्तुत किया है वह श्रृंगार का उन्मादक रूप श्लाघनीय नही है। कवि प्रतिभा का इस प्रकार का उन्मेष ठीक नहीं है। प्रियंगुमंजरी कालिदास से कहती है - "बहुत विचित्र-सा लग रहा है। उज्जयिनी के जिस नागरिक ने कभी राजप्रासाद के सिंहद्वार मे भी पैर नहीं रखा, मुझे कभी देखा नहीं, जाना नही, वह इस आठवें सर्ग के पृष्ठ खोलेगा····और मेरे भवन के अन्तःपुर के शयनागर के बन्द द्वार खुलने लगेंगे। ····मेरे बिलकुल निजी अनुभव, मेरी नितान्त व्यक्तिगत अनुभूतियाँ इस तरह उजागर हो जाएँगी, जैसे किसी प्रदर्शनी में रखी हों।···"[46]

आखिर प्रियंगुमंजरी यह भी कहती है रचनाकार से विवाहित होने पर कुछ भी गोपनीय नहीं रह पाता है। प्रियंगुमंजरी के शब्दो में - "मालूम नहीं था कि रचनाकार से जीवन जोड़ लेने के बाद कुछ भी गोपनीय नहीं रह पाता।"[47]

प्रियंगुमंजरी के वक्तव्य पर कालिदास की टिप्पणी बड़ी ही व्यंग्यपूर्ण है। कालिदास प्रियंगुमंजरी से कहता है - "सुनो।···अगले जन्म में किसी कवि या लेखक से ब्याह मत करना। अच्छा।"[48]

यद्यपि काव्य में कवि की आत्माभिव्यक्ति उसका जीवनानुभव उसके काव्य में दृष्टिगोचर होता है फिर भी कभी-कभी यह आत्माभिव्यक्ति यह जीवनानुभव कवि की पत्नी के लिए चिंताजनक और कष्टकारी हो सकता है। भारतीय विवाहित नारी अपनी प्रणय-लीलाओं की गोपनीय बातें किसी के सामने प्रकट न हो इसप्रकार की इच्छा करती हैं। लेकिन कवि की पत्नी को इससे छूट नहीं मिलती है, यही सच है।

सम्राट चन्द्रगुप्त कालिदास द्वारा अंकित प्रणय-लीलाओं मे अश्लीलता नही मानते हैं। उनके शब्दों में "आठवें सर्ग" में एक पति-पत्नी की प्रणय-लीला का

चित्रण है और पति-पत्नी के बीच कुछ भी अश्लील नहीं होता, क्योंकि वह पूरी तरह देने और पूरी तरह पाने का सम्बन्ध है। इसमें अश्लीलता उसी को मिलेगी, जिसकी दृष्टि अधूरी होगी, अर्थात् जो केवल नग्नता देखेगा, उसे औचित्य देने वाली पूर्णता नहीं सार्थकता नहीं।"[49]

स्त्री-पुरूष के संबंध के बारे में विख्यात साहित्यकार और उपन्यासकार तथा मनोवैज्ञानिक जैनेंद्र कुमार के विचार भी महत्वपूर्ण हैं। वे लिखते हैं - "स्त्री और पुरूष के मध्य जो आकर्षण है वह परस्पर उन्हें आत्मदान में मिलाये. और आत्मदान की अनिवार्यता मूलगत और टिकने वाली है। यह अब मनुष्य पर है कि उसे अध्यात्म वृत्ति से लेकर उपयोगी करे, या तिरस्कार के भाव से अवहेलित करे।"[50]

कालिदास के अनुसार एक पति-पत्नी के संबंध में जो कुछ लिखा जाता है उसे अश्लीलता नहीं कहनी चाहिए। वह रचनाकार की रचना की एक तरह से आत्माभिव्यक्ति ही है और इस बात को सम्राट चन्द्रगुप्त भी स्वीकार करते हैं।

वास्तव में सम्राट चन्द्रगुप्त के सामने यह समस्या उपस्थित होती है कि आठवें सर्ग मे पति-पत्नी प्रणय-क्रीडा को उमा-महादेव के रूप में चित्रित किये जाने के कारण यह बात एक तरह से लोगों के धार्मिक विश्वासों पर आघात करने वाली है और इसीकारण इस पर लोगों की दृष्टि अपनी धार्मिक भावनाओं कालिदास ने आघात किया है इस पर केंद्रित हुई है।[51] अतः यह स्पष्ट है कि राजगोष्ठी में आठवें सर्ग का जो पाठ सभा-मंडप में हुआ है उसमें लोगों की धार्मिक भावना को ठेंस पहुँची है। इसलिए धर्मगुरू, राजपुरोहित धर्माध्यक्ष, उज्जयिनी के हजारो नागरिक सब बैचेन हुए हैं, अतः साहित्यकार को शृंगार वर्णन में कहाँ तक छूट दी जाए यह भी एक कठिन समस्या है और इसका हल करना और भी कठिन है।

साहित्य और राजनीति का (जो) घनिष्ठ संबंध है। इस दृष्टि से देखा जाय तो केवल रचनाकार की रचना को ही ध्यान में नहीं रखा जा सकता है।

"अभिज्ञान-शाकुन्तल" की स्वर्णजयन्ती और कवि सम्मान

आज यह बात सब लोगों ने मुक्तकंठ से स्वीकार की है कि कालिदास की सर्वोत्कृष्ट रचना "अभिज्ञानशाकुन्तलम्" नाटक है और कालिदास के समय में भी इस नाटक की प्रशंसा की जाती थी। प्रियंवदा के शब्दों में "अभिज्ञानशाकुन्तल" की लोकप्रियता सहज ही दिखाई देती है - "आज शाकुन्तल की स्वर्णजयन्ती है।"[52]

जिसप्रकार "आठवाँ सर्ग" नाटक के प्रथम अंक में तीन त्यौहारों का उल्लेख किया गया है, उसी प्रकार नाटक के तीसरे अंक में भी तीन त्यौहारों का उल्लेख है। एक ही दिन में होने वाले तीन त्यौहार - 1·कामोत्सव का त्यौहार, 2·अभिज्ञान-शाकुन्तल" की स्वर्णजयंती, 3·सम्राट चंद्रगुप्त के शासन द्वारा कालिदास का अभिनंदन।

यहाँ फर्क इतना ही है कि वहाँ "कुमारसम्भव" के आठवें सर्ग का पाठ राजप्रासाद में होने का उल्लेख है। और शाकुन्तल के प्रदर्शन का आयोजन राजप्रासाद में ही नहीं रंगशाला में भी होने वाला है। इससे एक बात स्पष्ट होती है कि नाटककार कालिदास की 'शाकुन्तल' अभिजात नाट्यकृति है और रंगमंच पर उसके अनेक प्रयोग हुए होंगे और तत्कालीन नाटककारों ने उसकी भूरी-भूरी प्रशंसा की होगी।[53]

आज भी हम देखते हैं कि किसी नाटक के सौ या पाँच सौ या हजार प्रयोग रंगमंच पर होते हैं और नाटककार की नाट्यकृति की प्रशंसा की जाती है। और नाटककार का अभिनन्दन किया जाता है। उसे पुरस्कार भी दिया जाता है। कभी शासन की ओर से तो कभी सांस्कृतिक संस्थानों की ओर से। नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "अभिज्ञानशाकुन्तल" की स्वर्णजयन्ती के अवसर पर रंगमंच पर उसका प्रयोग होने का जो उल्लेख किया है उसमें आधुनिकता बोध सहज ही दिखाई देता है।

स्वर्णजयन्ती के समारोह में कालिदास की अनुपस्थिति

कालिदास की "अभिज्ञानशाकुन्तल" नाट्यकृति एक अमर कलाकृति है। जिसके कारण स्वयं नाटककार भी अमर हो गया है। कालिदास के कीर्ति का उच्चांक यह शाकुन्तल नाटक है। सम्राट चन्द्रगुप्त के शासन काल में रंगशाला में इस नाटक का मंचन और कालिदास के अभिनन्दन कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। इस आयोजन में सम्राट चन्द्रगुप्त उनकी पुत्री और कालिदास की पत्नी प्रियंगुमंजरी

उज्जयिनी के अनेक भद्र लोग आदि उपस्थित हो जाते हैं लेकिन अभिनन्दनीय नाटककार अर्थात कालिदास का आसन खाली दिखाई देता है। प्रियंगुमंजरी के शब्दो में - "कैसा मनोहारी दृश्य था···रंगशाला के चारो ओर कलानुरागी नागरिकों की एक-एक परतें···अन्दर घुसने को आतुर मानवीय हिलोरें····और रंगशाला के भीतर उज्जयिनी का···भद्रलोक···मंच पर सम्राट और सत्ता के पाँच प्रतीक···अभिनंदनीय नाटककार का आसन···खाली है।···वायु की गतिवाला धावक कुटीर तक जाता है···और लौटकर यही कह पाता है कि ···कविकुलगुरू का कोई पता नहीं·।"[54]

"अभिज्ञानशाकुन्तल" नाटक की स्वर्णजयन्ती के आयोजन में कालिदास की अनुपस्थिति उसके कविहृदय पर पडे हुए आघात का ही कारण है। आठवें सर्ग पर अश्लीलता का जो आरोप किया गया था और कालिदास की आत्माभिव्यक्ति को जो ठेंस शासक वर्ग ने पहुँचायी थी इसीकारण कालिदास इस आयोजन में उपस्थित नहीं रहा यह स्पष्ट होता है। इस समारोह में उपस्थित न रहकर कालिदास ने कवि जाति के स्वाभिमान को दोहराया है। और शासन के तथाकथित मान-सम्मान को ठुकराया है। साथ ही कालिदास ने यह भी दर्शाया है कि किसी भी कलाकार की कलाकृति कलाकार को निजी कृति जरूर होती है लेकिन उसमे निहीत रस-सृष्टि तमाम पाठकों और दर्शकों को प्रभावित करती है और सच्चा कलाकार किसी शासन द्वारा आयोजित मान-सम्मान समारोह से सम्मानित नहीं होता है बल्कि अपनी अनुपम कलाकृति से अपरिमेय आनंद आप ही आप प्राप्त कर लेता है। यहीं कवि की रचनाधर्मिता की सच्चाई कवि के कीर्तिकलश की अच्छाई है। सुरेन्द्र वर्मा लिखित "आठवाँ सर्ग" में कालिदास के राज-सम्मान में अनुपस्थित रहकर सम्मान ठुकराने के बारे में डॉ ब्रजकिशोर के विचार उल्लेखनीय हैं -

"इस संदर्भ में याद आते हैं ज्याँ-पाल सार्त्र, जिन्होंने साहित्य के लिए श्रेष्ठतम उपलब्धि "नोबेल पुरस्कार" को ठोकर मार दी थी। कालिदास ही की भाँति उन्होंने भी अपने कृतित्व एवं सृजनात्मक विचारों से विश्व-जनमत को असामान्य रूप से प्रभावित किया और स्वयं भी फ्रान्स जैसे ही महत्वपूर्ण बन बैठे। स्वयं "चार्ल्स द गाल" ने स्वंय को जो फ्रान्स मानते थे, घोषणा की थी, कि "सार्त्र भी फ्रांस"

है। इस प्रकार कालिदास और सार्त्र राज्याश्रय एवं राज-सत्ता पर बौद्धिक सत्ता की विजय के प्रतीक बन जाते हैं।[55] इसमें सन्देह नहीं कि नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने कालिदास की सर्जनात्मक प्रतिभा का परिचय देकर कालिदास के मिथक की नयी व्याख्या की है।

कालिदास के व्यक्तित्व के कुछ अन्य पहलू

सुरेन्द्र वर्मा के "आठवाँ सर्ग" नाटक में कालिदास के कुछ अन्य पहलू भी नजर आते हैं जो इसप्रकार हैं -

प्रकृतिप्रेमी कालिदास

सुरेन्द्र वर्मा लिखित आठवाँ सर्ग में प्रकृति प्रेम दो प्रसंगों पर दिखाई देता है। राजगोष्ठी में "आठवाँ सर्ग" के पाठ पर श्लीलता और अश्लीलता के बारे में जो बहस होती है, तब कालिदास उससे छुटकारा पाने के लिए सभामण्डप से चुपचाप निकल जाते हैं। शिप्रा नदी के एकान्तवास को पसन्द करता है।

वाद-विवाद से छुटकारा पाने के लिए कालिदास एकांतवास को स्वीकार कर शिप्रा नदी के पास जाने की घटना उसका प्रकृति-प्रेम का ही द्योतक है। प्रकृति का मौन सौन्दर्य कालिदास को भावविभोर करता है और कालिदास उस सौन्दर्य में कुछ क्षण शिप्रा नदी के तट पर रूक जाता है। प्रकृति के सौंदर्य के प्रति कालिदास का यह रूझान उसके ही शब्दों में देखा जा सकता है - "शिप्रा के निर्जन तट पर···गहरा अँधेरा था वहाँ और गहरी शान्ति····ऊपर घने बादलों में चन्द्रमा का हल्का-सा आभास और सामने बहुत दूर पर्वत-श्रेणियों के धुंधले चढ़ाव-उतार···हवा रूकी थी। पत्ता हिलता नहीं था। लहरे भी निश्चल थी। ···बस कभी-कभी बालू के छोटे-छोटे कगार नदी में धसक जाते थे। चौककर वृक्षों की ऊपरी शाखों पर कभी कोई पक्षी पर फड़फड़ाता, चहचहाता···और फिर मौन, फिर नीरवता···"[56] कालिदास का प्रकृति-प्रेम उसके व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। "शाकुन्तल" नाटक के स्वर्ण-जयंती के अवसर पर जनता के द्वारा कालिदास का मान-सम्मान समारोह आयोजित किया जाता है। सम्राट चन्द्रगुप्त इस समारोह का आयोजन करते

हैं। लेकिन कालिदास उस सम्मान से विमुख होकर शिप्रा नदी के सौन्दर्य की ओर ही आकृष्ट होता है।

सर्वप्रथम कालिदास शिप्रा नदी के आसपास के संध्य-सौन्दर्य से भावविभोर हो उठती है। कालिदास के शब्दों में - "संध्या - बेला को वन की शान्ति···कोविदार, कदम्ब और सर्ज के वृक्ष···उँचे। मौन···कुन्द और कुरबक के पौधे।···सुकुमार। निष्पाप।···पीछे शिप्रा···अपनी ही गति पर मुग्ध प्रवाह···जल की अनवरत कलकस··सलोनी ···निर्मल···मौलश्री के झुरमुट के पीछे डूबती लाल गोलाई···नदी की तरल सतह पर झिलमिलाती परछाइयाँ···लहरों पर डूबते-उतराते रंगों के इन्द्र-धनुष्य···।"[57]

इसमे संदेह नहीं कि जहाँ साधारण व्यक्ति भी प्राकृतिक सौन्दर्य की ओर आकृष्ट होता है। वहाँ कविकुलमणि और प्रकृतिप्रेमी कवि कालिदास का प्राकृतिक सौन्दर्य की ओर आकृष्ट होना सहज और स्वाभाविक है।

कलाभिरुचि संपन्न कालिदास

कालिदास स्वयं एक महान कवि और महान नाटककार हैं। साथ ही साथ विभिन्न ललित कलाओं के प्रति उसके मन में अपार अभिरुचि है। अपने मित्र सौमित्र के घर जाने पर वहाँ के आसपास के मदनोत्सव के विविध क्रिया-कलापों मे कालिदास सहभागी होता है और उनमें रुचि लेता है। कालिदास के शब्दों में - "हाँ···कुछ देर घूमता रहा, रास्तों और गलियों में···गायन और वादन सूनता हुआ, स्वाँग और नाच देखता हुआ···कोलाहल और कलख का प्रत्यक्ष साक्षी बना, उसी का एक भाग होकर··सुन रही हो ? ···आज मदनोत्सव है और उसे मनाने के लिए नगरवासी जैसे मदनोन्मत्त हो उठे हैं···सामूहिक करतल-ध्वनि और अकेले मृदंग का मधुर घोष···मर्दल का गुरुगम्भीर गर्जन और चर्चरी की दूर-दूर तक गूँजने वाली उन्मादिनी लय···उत्तेजक नृत्यों में अस्त-व्यस्त, वस्त्र, उडती मालाएँ बिखरे केशपाश···श्रम से लाल हुए कपोल और माथे पर स्वेद-बिन्दु···महलों के गवाक्षों में मुखमंण्डल जैसे जडे हुए····नीचे पिचकारी लिये ढीठ युवतियाँ और ऊपर से सोल्लास बरसता हुआ अबीर और गुलाल ···ऐसा घना और निरन्तर··कि दिशाएँ

तक धूमिल हो उठी है....."[58]

ईर्ष्या का शिकार कालिदास

कालिदास उज्जयीनी मे इसलिए विशेष प्रसिद्ध हुआ क्योंकि उसकी रचनाएँ राजदरबार के सभी लोगों को विशेष पसंद आयी। उस समय उज्जयिनी रचनाकारों का एक ऐसा वर्ग दिखाई पडता है जो कालिदास के प्रति ईर्ष्या भाव से भरा हुआ है। उस समय का एक रचनाकार दिङ्नाग कालिदास के प्रति इर्षाभाव रखनेवाला व्यक्ति है। जब मित्रगोष्ठी में सौमित्र के आग्रह पर कालिदास ने आठवाँ सर्ग पाठ पढ़ा। उस समय दिङ्नाग नामक एक रचनाकार भी था जिसने आठवें सर्ग के बारे में धर्मगुरू के कान फूँक दिये।[58] इसप्रकार यह दिखाई देता है कि किसी श्रेष्ठ रचनाकार या कलाकार के प्रति एक ऐसा द्वंन्द दिखाई देता है जो श्रेष्ठ कलाकार या रचनाकार के प्रति अपनी ईर्षा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्त करता रहता है।

जैसे को तैसा

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने "आठवा सर्ग" (दूसरा अंक) यह दर्शाया है कि धर्माध्यक्ष कालिदास के प्रति दुश्मनी रखते हैं। दुश्मनी का प्रमुख कारण यह है कि जब कालिदास नये-नये उज्जयिनी आये थे तब धर्माध्यक्ष ने कालिदास के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया और बाद में कालिदास ने धर्माध्यक्ष की उपेक्षा की।[60] कालिदास के द्वारा धर्माध्यक्ष की गयी उपेक्षा जैसे को तैसा व्यवहार का द्योतक है।

संवेदनशीलता

प्रियंगुमंजरी के अनुसार कालिदास ज्यादातर संवदेनशील है। कालिदास बहुत कोमल हृदयी भी है।[61] मित्र-गोष्ठी में दिङ्नाग के काव्य में अश्लीलता के दोषारोपण पर कालिदास दुःखी होकर शिप्रा नदी के नट पर जाता है और इसकी जानकारी उसका मित्र सौमित्रा प्रियंगुमंजरी को देता है, तब वह चिंतित होकर कालिदास के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती है।

स्वाभिमानी कालिदास

"कुमारसम्भव" का "आठवाँ सर्ग" अश्लील है। इसप्रकार की लिखित आपत्ति महाकाल के पुजारी उठाते हैं। जिसकी वजह से अभियोग चलाया जाता है। इस अभियोग को चलाने के लिए जिस न्यायसमिति की रचना की गयी है वह न्यायसमिति यह भी सोच सकती है कि "कुमारसम्भव" से एक नागरिक अर्थात् वादी की धार्मिक-भावना को ठेंस पहुंचती है। इसलिए इस पुस्तक का लेखक न्यायालय में सार्वजनिक रूप से उससे क्षमा-याचना करें।

अगर कालिदास अभियोग की कार्यवाही प्रारंभ होने से पहले ही क्षमा-याचना कर ले, तो वादी संतुष्ट हो जाएगा और अभियोग अपने आप ही उठा लिया जायेगा।[62]

धर्माध्यक्ष के इस वक्तव्य पर कालिदास तीखे स्वर में स्पष्ट बताता है कि कालिदास क्षमा-याचना नहीं करेगा। इतना ही नही धर्माध्यक्ष के इस कथन पर की अगले सप्ताह मे होने वाली बैठक में कालिदास उपस्थित होकर क्षमा-याचना करेगा तो यह अभियोग खत्म हो सकता है लेकिन कालिदास गुस्से में आकर उत्तर देता है कि "जी नहीं।"[63] इतना ही नहीं कालिदास को क्षमा-याचना कर लेने के लिए एक सप्ताह का ही नहीं, एक मास तक का समय दिया जाने के बारे मे कहा जाता है फिर भी कालिदास अपने विचार पर, उत्तर पर, दृढ है। न्यायसमिति के सदस्यों के सामने सिर झुकाने की अपेक्षा आत्महत्या कर लेना स्वीकार करता है। वह धर्माध्यक्ष से कहता है - मैं वहाँ जाऊँगा ? तुम्हारी उस अन्धी समिति के सामने ?···तुम मतिमन्दों को मनाने ? समझाने ?···अरे धर्माध्यक्ष। मैं विष खा लूँगा, विष ···डूब मरूंगा शिप्रा में···लेकिन किसी भी मूल्य पर···।"[64] इसमे संदे नहीं कि नाटककार ने कालिदास के स्वाभिमान के साथ ही साथ साहित्यकार की ओर भी संकेत किया है। वस्तुतः "साहित्यकार की प्रतिभा क्रियाशील करने के लिए सृजन की आन्तरिक स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है और जब उसकी आन्तरिक स्वतंत्रता खतरे में पड जाती है तो वह ऐसी सत्ता से विद्रोह करता है, देश-निर्वासन स्वीकार करता है, कारागर की सख्तियाँ झेलता है। ऐसी स्थिति में वह आत्महत्या

कर लेगा या मृत्युदण्ड को भोगेगा, या मौन हो जायेगा क्योंकि स्वतंत्रता उसे लिए साधनामात्र नहीं साध्य भी है। साहित्य स्वतंत्रता का बोध है,जिसके बिना सौंदर्यानुभूति संभव नहीं।"[65]

कुटिल कालिदास

जब कालिदास "कुमारसम्भव" का "आठवाँ सर्ग" लिखने के लिए शिपा नदी के तट पर अकेला जाता है तब प्रियंगुमंजरी को दुःख होता है। कालिदास एक मास वही ठहरता है और आठवाँ सर्ग पूरा कर वहाँ से लौटता है। कालिदास के वापस लौटने पर प्रियंगुमंजरी को मन में खुशी होती है। लेकिन "आठवाँ सर्ग" के पाठ के समय संगोष्ठी में हुए वाद-विवाद के कारण उसे दुःख भी होता है जब दोनों पति-पत्नी अपने महल में बातचीत करते रहते हैं तब प्रियंगुमंजरी कालिदास को "कुटिल"[66] कहती है।

इतना ही नहीं वह यह भी कहती है कि, कालिदास का व्यक्तित्व विरोधाभासात्मक है। प्रियंगु के प्रति अपवाद फैल जाना, प्रियंगु का लज्जित होना, प्रियंगु का अपमान होना, कालिदास को भला लगता है। प्रियंगु के शब्दों में - "प्रियंगु को लेकर अपवाद फैलता है, तो तुम्हें भला लगता है ? प्रियंगु लज्जित होती है, तो तुम सुख पाते हो ? प्रियंगु का अपमान होता है, तो तुम्हारा स्वास्थ बढ़ता है ?[67] चरित्र-चित्रण का यह विरोधाभास प्रभावान्विति की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

शराबी कालिदास

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने कालिदास के इस व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है कि कालिदास शराबी है। जब धर्माध्यक्ष कालिदास के भवन में रात प्रवेश करता है और आदेशपत्र दिखाता है। तब दोनो में न्यायसमिति के बारे मे बातचित होती है। तब धर्माध्यक्ष गंगाजल पीते हुए और कालिदास शराब पीते हुए मंच पर दिखाई देते हैं। जब एक रात सम्राट चन्द्रगुप्त कालिदास के भवन में प्रवेश करते हैं और साहित्य और कला के बारे में दोनों में बातचित होती है तब सम्राट चन्द्रगुप्त और कालिदास मदिरा के घूँट पीते हुए नजर आते हैं।[68]

कालिदास के मिथक को नाटककार ने नये रूप-रंग मे चित्रित कर आधुनिक कालिदास का परिचय दिया है। आज के रचनाकारों की शराब पीना एक आदत बन गयी है और यह आदत उनका बड़प्पन भी माना जा रहा है। वास्तव में साहित्य-सृजन के लिए या उसके साहित्य की समीक्षा के बारे में चर्चा करते समय मदिरा पीना कहाँ तक उचित है, यह एक अलग बात है। पता नही, प्रकृतिरूपी प्रेयसी के साथ मदिरारूपी प्रेयसी की भी आवश्यकता रचनाकारों के लिए आवश्यक है। लेकिन आजकल यह जरूर दिखाई देता है कि आज का साहित्यकार प्रकृति, प्रेयसी और मदिरा के उन्माद में ही मुख्यतया साहित्य का सृजन करता दिखाई पडता है। क्योंकि आज के साहित्य मे चाहे वह नाटक हो, या उपन्यास, या कहानी उसमें पत्नी, प्रेयसी, बेडरूम, तथा मदिरा के नशीले प्रसंग ही ज्यादातर नजर आते हैं। पुरातन कालिदास में भी यह बाते थीं ? कौन जाने ?

हठवादी कालिदास

"आठवाँ सर्ग" नाटक के दूसरे अंक के अंत में नाटककार ने सम्राट चन्द्रगुप्त के माध्यम से कालिदास की हठवादिता पर भी प्रकाश डाला है। सम्राट चंद्रगुप्त कालिदासलिखित "आठवाँ सर्ग" के अश्लीलता को रद्द करने का सूझाव देते हैं। उमा-महादेव के प्रणय-प्रसंग हटा देने को कहते हैं, इतना ही नहीं धर्माध्यक्ष कालिदास को अश्लीलता के नाम पर देहदंड दे सकता है। पड़ोसी राष्ट्र गुप्त साम्राज्य के खिलाफ विद्रोह कर सकते हैं और इसीकारण आत्माभिव्यक्ति की अपेक्षा साहित्यकार की सामाजिकता के प्रति आस्था होनी चाहिए और समाज और राजनीति के सामने अपना सिर झुकाना चाहिए लेकिन कालिदास सम्राट चन्द्रगुप्त के इन बातों को ठुकराता है। चन्द्रगुप्त और कालिदास के बीच हुए वार्तालाप में हठवादिता संकेतित होती है।

चन्द्रगुप्त : अर्थात् झुकना तुम्हे ही है, समझौता तुम्हें ही करना है, क्योंकि इसी में तुम्हारा हित है···और मेरा भी।

कालिदास : यदि ऐसा नहीं हुआ तो ?

चन्द्रगुप्त : कालिदास! व्यर्थ का हट मत करो।"[69]

यहाँ कालिदास का हठवादी स्वभाव दिखाई देता है लेकिन इसका यह हठ साहित्यकार की स्वतंत्रता का द्योतक है।

चरित्र-चित्रण विधि

सुरेन्द्र वर्मा लिखित "आठवाँ सर्ग" नाटक में चित्रित कालिदास के चरित्र-चित्रण में मुख्यतया निम्नलिखित चरित्र-चित्रण विधियों को नाटककार ने अपनाया है।

1· अन्य पात्रों द्वारा कालिदास के चरित्र पर प्रकाश

2· प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण प्रणाली

3· संवाद में संवाद शैली

4· आत्म-निवेदन शैली

5· व्यंग्यात्मक शैली

1· अन्य पात्रों द्वारा कालिदास का चरित्र-चित्रण

"आठवाँ सर्ग" नाटक में कीर्तिभट्ट, प्रियंगुमंजरी, अनसूया, प्रियंवदा, सम्राट चन्द्रगुप्त आदि पात्रों के द्वारा कालिदास के चरित्र-चित्रण पर प्रकाश डाला गया है।

1· कीर्तिभट्ट द्वारा रचनाधर्मिता

कालिदास के चरित्र-चित्रण में नाटक का एक पात्र कीर्तिभट्ट का योगदान महत्वपूर्ण है। "आठवाँ सर्ग"नाटक के प्रथम अंक में "कुमारसम्भव" के आठवें सर्ग की रचना-प्रक्रिया पर मुख्यतया कीर्तिभट्ट द्वारा ही प्रकाश डाला गया है और दिखाया गया है कि महाकवि कालिदास की काव्य-सर्जना कैसे होती है। प्रियंवदा तथा कीर्तिभट्ट वार्तालाप को देखा जा सकता है -

प्रियंवदा : {उत्सुकता से} कीर्तिभट्ट। आठवाँ सर्ग कब परा हुआ ? कैसे पूरा हुआ?···
तुमने तो एक-एक पृष्ठ की रचना देखी होगी ?

कीर्तिभट्ट : तीन दिन पहले हुआ था। और जो तुम पूछती हो कि कैसे हुआ, तो समझ लो कि कीर्तिभट्ट के वहाँ रहने से हुआ।···
सच कहता हूँ प्रियंवदा, एक सप्ताह तो कविवर ने एक शब्द

नहीं लिखा। बस, बैठे-बैठे पहले के सातों सर्ग पढ़ते रहते, या चुपचाप टकटकी लगाये कोरे भोजपत्र को निहारते···जैसे किसी ने जादू कर रखा हो। मैं पूछता कि आपानक लाऊँ? भोजन के लिए क्या बनाऊं ? तो उत्तर ही नहीं मिलता जैसे वाणी राजधानी में ही छोड आये हो।···भीतर से निकलते, तो उपवन मे आ जाते। उपवन से निकलते, तो बाहर, वन में जा पहुँचते।···प्रातः काल देखता कि उषा की लाली परख रहे हैं, सायंकाल देखता कि झरने के किनारे बूंदों की बौछार मे भीग रहे हैं, आधी रात को देखता कि उजली चाँदनी में टहल रहे हैं।···सात दिन तो मैं चुप रहा। आठवें दिन मैंने कह दिया कि स्वामी। ऐसे कैसे चलेगा ?···तीन सप्ताह बाद आपको यह सर्ग पढ़ना है, आपका राजकीय सम्मान होना है। कहीं ऐसा नहीं कि सर्ग-रचना न हो सके, तो सम्मान ही न मिले।"[70]

2· प्रियंगुमंजरी द्वारा (उद्दाम शृंगार)

कालिदास की पत्नी राजदुहिता सम्राट चंद्रगुप्त की बेटी है जो विदुषि तथा कलाभिरूचि संपन्न है। प्रियंगुमंजरी के द्वारा कवि कालिदास की शृंगारी व्यक्तित्व का परिचय सहज ही दिखाई देता है। प्रियंगुमंजरी शयनागार में कालिदास द्वारा लिखित "आठवाँ सर्ग" का पाठ सूनती है ओर कालिदास की शृंगारी प्रवृत्ति पर टीका-टिप्पणी करती है। -

"तुम पन्ने पर पन्ने पलटते जाओगे और श्रोता जैसे दर्शक बनकर पति-पत्नी की उन्मुक्त प्रणय-लीला देखेंगे····यौवन के उष्ण रक्त में ज्वार आने के चित्र····उत्तेजना और उन्माद और तृप्ति के आरोहावरोह···दो शरीरों के एक-दूसरे में समा जाने के दृश्य···मैं वही बैठी रहूँगी, चुपचाप, सिर झुकाए···पलक उठाकर किसी ओर देख नहीं सकूँगी और हर पल, हर क्षण कचोटती रहेगी। यह बात कि तमाम आँखे मेरे ही ऊपर लगी हुई है।"[71]

3· <u>अनसूया द्वारा ‡श्रृंगारिकता‡</u>

अनसूया द्वारा कालिदास के काव्य-पाठ के सन्दर्भ में कालिदास की काव्य-प्रतिभा, कालिदास का श्रृंगार वर्णन आदि बातें नजर आती हैं। कालिदास के श्रृंगार वर्णन का परिचय अनसूया निम्नलिखित पंक्तियों में देती है -

"शयनागार में उमा और महादेव एक-दूसरे को पराजित करने पर तुले हुए थे। दोनों के केश छितरा गये, चन्दन पुछ गया, उमा की मेखला टूट गयी, लेकिन उनकी साथ क्रीडा-केलि से महादेव का मन नहीं भरा····"[72]

4· <u>प्रियंवदा द्वारा ‡लोकप्रियता‡</u>

नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने कालिदास के "शाकुन्तल" नाटक की लोकप्रियता तथा कवि के सम्मान के बारे में प्रियंवदा के द्वारा सर्वश्रेष्ठ नाटककार के रूप में महाकवि कालिदास का चरित्र प्रस्तुत किया है। कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

"आज शाकुन्तल की स्वर्णजयन्ती है।···संस्कृत नाटक के इतिहास में किसी रचना को ऐसा गौरव नहीं मिला। गुप्त साम्राज्य के इतिहास में किसी नाटक को ऐसी लोकप्रियता नहीं मिली। कन्याकुमारी से हिमालय तक आज बस, एक ही नाटककी चर्चा है।·····"[73]

5· <u>चन्द्रगुप्त द्वारा ‡कीर्तिपताका‡</u>

कालिदास सम्राट चन्द्रगुप्त का जामात है। राजपुत्री प्रियंगुमंजरी उसकी पत्नी है। सम्राट चन्द्रगुप्त महाकवि कालिदास की काव्य-प्रतिभा से प्रभावित है। और इसीलिए उन्होने कालिदास की लोकप्रियता और कीर्तिमत्ता को निम्नालिखित शब्दों में व्यक्त किया है , वे चन्द्रगुप्त से कहते हैं - "तुम वह सराहना पाओ, जो तुम्हारा अधिकार है ?····तुम नहीं चाहते कि तुम्हारी कीर्ति सागरों जैसा विस्तार जाने और तुम्हारा नाग धृव तारे जेसा स्थायित्व ?···तुम यह भी नहीं चाहते कि तुम्हारा एक और अकेला स्वर लाखों-कराडों स्वरों में ढलता हुआ देश-देशान्तर को पार करके क्षितिज के चारों छोरों मे प्रतिध्वनित हो उठे ?"[74]

इसमे संदेह नहीं कि कालिदास के व्यक्तित्व के विविध पहलुओं को नाटक में प्रयुक्त अन्य पात्रों द्वारा चित्रित किया है जो कालिदास के चरित्र-सृष्टि की गरिमा व्यक्त करते है।

2· प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण प्रणाली (गर्वोक्ति)

"आठवाँ सर्ग" नाटक में कालिदास ने स्वयं अपने चरित्र को उद्‌घाटित किया है। विशेषतः कालिदास की आत्माभिव्यक्ति उसमे दिखाई पडती है। कालिदास की प्रकृति-प्रियता और भाषा संस्कारिता उनके शब्दों में देखी जा सकती है। मित्र-गोष्ठी में शृंगार रस पर हुई चर्चा के बाद कालिदास शिप्रा नदी के तट पर पहुँचता है और बाद में अपने महल में प्रवेश करने पर अपनी पत्नी प्रियंगुमंजरी के सामने अपना शृंगार-वर्णन और प्रकृति-प्रेम व्यक्त करता है - "जीवन को कामना और मोह देने के कारण काम को कल्याणकर भी कहते हैं। ···और इसका यह भुवनमोहन रूप····वसन्त इसका सखा···कोयल इसकी वैतालिक···फूलों का धनुष···भौरों की पाँत की डोरी···आम्र-मंजरियों के बाण···।"[75]

शाकुन्तल की स्वर्ण-जयन्ती पर सम्राट चन्द्रगुप्त तथा प्रियंगुमंजरी और अन्य दर्शकों के सामने "शाकुन्तल" का मंचन हो जाता है। उस समय कालिदास स्वयं अनुपस्थित रहता है। लेकिन दर्शकां द्वारा नाट्य-प्रयोग की स्तुति द्वारा जनता के अभिनंदन पर वह खुश होता है और वह अपनी आत्माभिव्यक्ति पर गर्व करता है। "गर्व"?···करता हूँ अपनी रचना पर···जब तक अपने रचनाकक्ष में होता हूँ····तब मेरे सामने केवल अपनी अभिव्यक्ति होती है।···पर जिस पल मैं अपने कक्ष से बाहर पाँव रखता हूँ तभी अलग-अलग तरह के प्रश्न आकर रचना के साथ गुँथने लगते हैं···बहुत छोटे, बहुत तुच्छ···लेकिन महत्वपूर्ण··"[76]

3· संवाद में संवादशैली (एकांतप्रियता)

कालिदास के व्यक्तित्व पर संवाद मे संवादशैली पर प्रकाश डाला गया है। कालिदास की "कुमारस्म्भव" के आठवें सर्ग की रचनाप्रक्रिया में कीर्तिभट्ट द्वारा

संवाद में संवाद का प्रयोग देखने को मिलता है - "स्वामी से इतना कहा कि राजधानी सवे पचास कोस दूर उस कूटीर में जाने की कया विवशता है ? यही रहकर अपने महाकाव्य का आठवाँ सर्ग पूर कर लीजिए···लेकिन नहीं। राजधानी में कोलाहल होता है···हर दिन गोष्ठियाँ और सभाएँ की जाती हैं। लोग भेंट के लिए आते हैं।···अवकाश नहीं मिलता। मन एकाग्र नहीं हो पाता।···[77]

4· आत्म-निवेदश शैली (विलाप)

आत्म-निवेदश शैली दारा भी कालिदास का चरित्र उजागर हुआ है। नाटक के तीसरे सर्ग के अन्त में अज-विलाप पर प्रकाश डाले हुए कालिदास ने श्रृंगार के वियोग पक्ष पर प्रकाश डाला है। कालिदास के शब्दों मतें - "मेंरा आक्रोश है रचना की इस प्रवृत्ति पर ···कि यह अपने आप में सम्पूर्ण नहीं है।···यह सम्प्रेषण और तादात्म्य चाहती है।···हालाँकि अब मैं पर्याप्त उदासीन हूँ···और चाहता हूँ कि यह अनुभूति बढती जाए···शायद इसी का परिणाम है यह····कि लिखना या इन्दुमती का स्वयंवर···अज के साथ उसका विवाह···जीवन में चाह और आस्था का सर्ग···पर जब कोरे भोजपत्र की चुनौती सामने आयी, तो लिखने लगा···इन्दुमती की मृत्यु के बाद अज का विलाप···"[78]

5· व्यंग्यात्मक शैली (व्यंग्यधर्मिता)

कालिदास के चरित्र-चित्रण में नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने कालिदास की वाक्-पटुता तथा व्यंग्यात्मक शैली का परिचय दिया है। न्याय-समिति के एक सत्य की खिल्ली उडाते समय धर्माध्यक्ष और कालिदास के बीच हुए वार्तालाप को देखा जा सकता है -

धर्माध्यक्ष : जी हाँ···आपको कोई आपत्ति ?

कालिदास : लीजिए, यह भी आपने क्या कहा ? मुझे भला आपत्ति क्यों होने लगी? वे ठहरे राज्य के न्याय-स्तंभ। दोनों में तो ऐसा गठबन्धन होना चाहिए, जैसा प्रगाढ आलिंगन में जकडे हुए प्रेमीयुगल···(ठिठककर) छीः छीः। ऐसा कीजिएगा, मेरा मन बडा पापी है।"[79]

इसप्रकार नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने कालिदास के चरित्र-चित्रण में विविध शैलियों का प्रयोग कर उसके चरित्र को संजोया है जो उचित ही है।

समीक्षकों की निगाहों में कालिदास

सुरेन्द्र वर्मा लिखित "आठवाँ सर्ग" नाटक में चित्रित कालिदास के चरित्र-चित्रण संबंधी समीक्षकों के कुछ महत्वपूर्ण अभिप्राय यहाँ दिये जा रहे हैं जिनसे कालिदास की व्यक्तिरेखा अधिक स्पष्ट हो सकती है -

डॉ·जयदेव तनेजा

"कालिदास अपने सौन्दर्य-बोध, प्रकृति प्रेम, पारिभाषिक ज्ञान की गोचरता, माधुर्य और प्रसाद गुण, बिम्बात्मक एवं आलंकारिक भाषा के लालित्य और परिष्कार ध्वनि और व्यंजना के प्राचुर्य तथा प्रणय सम्बन्धी भावनाओं एवं क्रीडाओं के चित्रण में अद्वितीय समझे जाते हैं और लगभग ये सभी विशेषताएँ कमोबेश हमें "आठवां सर्ग" मे देखने को मिलती है।"[80]

डॉ·सुन्दरलाल कथूरिया

"यद्यपि "आठवाँ सर्ग" पर "आषाढ़ का एक दिन" का प्रत्यक्ष-परोक्ष प्रभाव लक्षित होता है तथापि इसका कालिदास अपने साहित्य से बननेवाली धारणा को चरितार्थ करता प्रतीत होता है। तद्नुरूप यहाँ यह स्वाभिमानी, प्रकृति"प्रेमी, वाग्मी और श्रृंगारी है।"[81]

डॉ·नरनारायण राय

"यह सुरेन्द्र वर्मा के भीतर का साहित्यकार ही था जिसने समय की आवश्यकता को समझकर व्यक्तिगत श्रेय-प्रेय को त्याग नाटक के द्वारा यह घोषित करना अनिवार्य समझा कि, "एक रचनाकार रचना की उत्कृष्टता से जन सामान्य में जड़ जमाकर सत्ता के सामने विराट हो जाते हैं, और अपने इस प्रयोजन के लिए उन्हें कालिदास-सा बढ़िया चरित्र भी मिल गया था, जिसने राजकीय सम्मान और सत्ता के आमंत्रण को भी ठुकराने में देर नहीं की थी और सम्राट को यह स्वीकार करना पडा था कि वह कालिदास के साहित्यकार के प्रति कहीं अपराधी-सा अनुभव करते हैं।"[82]

डॉ॰राजशेखर शर्मा

"धर्माध्यक्षों के द्वारा किये गये अपमान और राजनीतिक दबाव के कारण कालिदास के "आठवाँ सर्ग" अधूरा छोडना पडता है। यही स्थिति समकालीन साहित्यकार की भी है। उसे भी आज के राजनीतिक तन्त्र और परम्परागत धार्मिक-सामाजिक मान्यताओं में समझौता करना पडता है। अद्यातकालीन समय में रचनाकारों की अभिव्यक्ति-स्वतंत्रता का छिन जाना इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है।"[83]

"वस्तुतः कालिदास की यह स्वतंत्र अभिव्यक्ति की पीड़ा आज के हर उस साहित्यकार की पीड़ा है जो स्वतंत्र साहित्यिक रचना में विश्वास करता है।"[84]

डॉ॰ब्रजराज किशोर

"कालिदास के प्रेममयी, कोमल-स्निग्ध रूप के अतिरिक्त उसके ओजस्वी, आत्माभिमानी, और दन्दात्मक स्वरूप को भली-भाँति उकेरा गया है। गोष्ठियों में काव्यपाठ, उसके पूर्व-अभ्यास, सृजन के लिए एकान्त एवं ध्यानस्थिति की अपरिहार्यता आदि विषयों के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षों पर कालिदास के माध्यम से सच्चा प्रकाश डाला गया है।"[85]

"कालिदास का चरित्र एक कवि-नाट्यकार के अत्यन्त संश्लिष्ट, संवेदनशील प्रकृति एवं एकान्त प्रेमी, स्वरूप को उजागर करता है। सर्जनात्मक सोपानों पर आरोहण के साथ-साथ वह उत्तरोत्तर और अधिक अकेला पडता जाता है। यह कालिदास की ही नहीं, प्रत्येक कलाकार की नियति और अनिवार्य परिणति है।"[86]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि नाटककार सुरेन्द्र वर्मा ने ऐतिहासिक कालिदास को आधुनिक रचनाकार के रूप में चित्रित कर कालिदास के पुराने मिथक की एक नयी व्याख्या प्रस्तुत की है।

रंगमंचीय बोध

नाटक का प्राणतत्व रंगमंच ही है। नाटक रंगमंच पर खेला जाता है जिससे उसकी विशिष्टता अपने आप ही सिद्ध होती है। नाटककार सुरेन्द्र वर्मा के "आठवाँ

सर्ग" में चित्रित कालिदास को ध्यान मे रखकर रंगमंचीय विवेचन-विश्लेषण करना हमारा उद्दिष्ट है।

मंच-सज्जा

सुरेन्द्र वर्मा का "आठवाँ सर्ग" नाटक तीन अंको में विभाजित है।, तीसरा अंक दो दृश्यों में विभाजित है। पूरे नाटक का केंद्रीय स्थल कविवर कालिदास का भवन है। नाटककार ने नाटक में आवश्ययक रंगसंकेत दिये हैं। नाटक के प्रथम अंक में मंचसज्जा पर नाटककार ने प्रकाश डाला है। मंच के बीच में एक लंबा आसन है फिर एक चौकी के साथ दो आसन हैं। उसके पीछे मदिराकोष्ठ है। बिल्कुल पिछे एक ओर झूला है और दूसरी ओर चित्रफलक है। बीच में ऊँचा दीपदान है। दायीं ओर बायीं ओर एक दरवाजा है। बाहरी दरवाजे पर मंगलकलश एवं रंगोली है। नाटक के तीनों अंकों में यही मंचसज्जा है। कोई विशेष परिवर्तन नहीं है।[87] अतः गुप्तकालीन होने के कारण वह तत्कालिन ऐश्वर्य का द्योतक भी है।

नाटक के दूसरे अंक में मंचसज्जा वही है, दीपदान में दीप जले रहे हैं। प्रियंगुमंजरी चित्रफलक के सामने हैं ओर बहुत अनमने भाव से कूची चला रही हैं ओर चित्र को रूककर देखती है।

नाटक के तीसरे अंक मे प्रथम दृश्य मे नेपथ्य में मंगलवाद्य ध्वनियों की झंकार सुनायी देती है ओर द्वितीय दृश्य में प्रारंभ में मच पर अंधार दर्शाया गया है और उदास पार्श्वसंगीत का प्रयोग हुआ है।

मंच का यह परिदृश्य नाटक का कथानक तथा कालिदास की चरित्र-सृष्टि में सहायक हुआ है।

अभिनेयता (क्रिया-व्यापार)

हमारा मुख्य प्रतिपाद्य कालिदास का चरित्र-चित्रण है अतः कालिदास के चरित्र-चित्रण की दृष्टि से अभिनय के कुछ प्रसंगों को उद्घाटित किया जा सकता है।

कालिदास की रचना-प्रक्रिया

नाटक के प्रथम अंक के प्रारंभ में ही कालिदास प्रत्यक्षतया रंगमंच पर दिखाई नहीं देता है लेकिन कालिदास के एक परिचारक कीर्तिभट्ट के अभिनय के द्वारा कालिदास का आभास सहज ही दर्शकों को हो जाता है। रचना-प्रक्रिया के बारे में कीर्तिभट्ट द्वारा प्रेषित निम्नांकित वार्तालाप दृष्टव्य है। कीर्तिभट्ट कहता है - "भीतर से निकलते, तो उपवन में आ जाते। उपवन से निकलते तो बाहर वन में जा पहुँचते।···प्रातःकाल देखता कि उषा की लाली परख रहे हैं, आधी रात को देखता कि उजली चाँदनी में टहल रहे हैं।···सता दिन तो मैं चुप रहा। आठवें दिन मैंने कह दिया कि स्वामी। ऐसे कैसे चलेगा ?···तीन सप्ताह बाद आपको यह सर्ग पढ़ना है, आपका राजकीय सम्मान होना है। कहीं ऐसा न हो कि सर्ग-रचना न हो सके, तो सम्मान ही न मिले।"[88]

शृंगारी कवि कालिदास

नाटक के प्रथम अंक मे नाटकार ने कालिदास और प्रियंगुमंजरी के प्रणय को मंच पर संयम के साथ दिखाया है। मदनोत्सव के प्रसंग पर कालिदास नगरवासियों के बीच नाचता है, अबीर, गुलाल में मशगुल होता है। अपने भवन मे आने के पश्चात प्रियंगुमंजरी उसे तीरछी चितवन से देखती हे ओर पूछती है यह अबीर गुलाल किसने डाला किसी ढीठ युवती ने ही। तब कालिदास प्रियंगुमंजरी को बाँहों से घेर लेता है। उसके कपोल को लाल करता है, फिर मुस्कराता है, एक हाथ से उसका मुँह अपनी ओर घुमाता है। दर्पण दिखलाने का बहाना करता है। और प्रियंगुमंजरी भी मुस्कुराती है। और कुछ क्षण ठहरकर "छोड दो" सहज भाव से कहती है।[89]

शयनागार के प्रसंग में प्रियंगुमंजरी के आग्रह पर कालिदास आठवें सर्ग का पूर्वाभ्यास करता है इस प्रसग में "कुमारसम्भव" के पहले सात सर्गो का संक्षिप्त विवेचन कालिदास करता है। तत्पश्चात नाटककार ने कालिदास तथा प्रियंगु के माध्यम से उनके वार्तालाप द्वारा उनकी शृंगारिकता को प्रकट किया है। जिसका विवेचन हमने प्रियंगुमंजरी द्वारा चरित्र-चित्रण अनुच्छेद में किया है। इस शृंगारिकता पर प्रियंगु कहती है कि इसमे कुछ भी गोपनीयता नहीं रही है। इस समय कालिदास अपनी पत्नी के कंधो पर हाथ रखता है। प्रियंगुमंजरी मुस्कुराती है। उसके वक्ष

मे मुँह छिपा लेती है। कालिदास अभिभूत-सा उसके केश सहलाता है। कालिदास से दृष्टि मिलने पर प्रियंगुमंजरी कुछ उदास सी मुस्कराती है। दोनों हाथ से उसके माथे को छूती है और अपने पति के सम्मान के बारे में हर्षित होती है और कालिदास से कहती है - "इस उन्नत मस्तक पर सम्राट सुवर्ण पट्ट बाँधेगे। राजपुरोहित मांगलिक श्लोक पढेंगे। धर्माध्यक्ष पूजन के पुष्पों की वर्षा करेंगे । ···सभा-मण्डप गूँज उठेगा करतल ध्वनि से ····लेकिन यह कैसी विडम्बना है कि जिस व्यक्ति को यह समारोह सबसे अधिक सुख देगा, वही उसमें सम्मिलित नहीं हो सकता···।"[90]

साहित्य में नैतिकता तथा अश्लीलता की ओर संकेत करते हुए प्रणय का चित्रण नाटक में किया गया है। कालिदास स्निग्ध दृष्टि से प्रियंगु की तरफ आता है। निकट आकर उसका दाया हाथ थाम लेता है। एक एक करके पाँचों उँगलियों देखता है और मुस्कराता है और कहता है कि कितनी कलाएँ आती है इन कोमल उँगलियां को। तत्पश्चात उँगलियाँ होठों से छुआने को होता है लेकिन यकायक ठिठक जाता है हाथ छोड देता है "उंगलियों का चुम्बन कही अश्लील तो नहीं होता ?"[91]

उक्त प्रसंग मे कालिदास की श्रृंगारिकता तथा व्यंगयात्मकता एक साथ दिखाई देती हे।

व्यंग्यधर्मिता

धर्माध्यक्ष और कालिदास के बीच हुए वार्त्तालाप को विशेषतः न्यायसमिति पर व्यंग्य करते समय कालिदास का अभिनय सहज ही देखा जा सकता है। न्यायसमिति पर व्यंग्य करते हुए प्रश्नार्थक शैली में रचनाकार की सृजनशीलता और व्यग्रता एक ही साथ दिखाई पड़ती है। कालिदास के शब्दों में - "मैं भी उन्ही निर्णायकों के बारे में जानना चाहता हूँ, धर्मराज। वे वांग्मय के तो प्रकाण्ड पण्डित होंगे ही ? काव्यशास्त्र का भी गहरा अध्ययन किया होग ? संस्कृत के पूरे साहित्यिक इतिहास के जानकार होंगे ?···उनका सौन्दर्यबोध बहुत परिष्कृत होगा। दृष्टि बडी सूक्ष्म होगी ?····व भावप्रवण होगे ? संवेदनशील होगे ? उदार विचारवेत्ता

होंगे ? विशाल हृदय होंगे। ···साहित्यप्रेमी के जिस आदर्श रूप की कल्पना की जा सकती है, वह जैसे उनमें साकार हो उठा होगा ?"[92]

जब कालिदास धर्माध्यक्ष द्वारा दिये गये आदेश पत्र को फेंकता है और "अन्धी समिति" पर फूट पडता है तब कालिदास और धर्माध्यक्ष के बीच जो बहस होती है और रचनाकार का स्वाभिमान जागृत होता है वह प्रसंग अभिनेयता की दृष्टि से लाजवाब है -

कालिदास : §फूट पडता है§ एक शताब्दी में भी नहीं···मैं वहाँ जाऊँगा ? तुम्हारी उस अन्धी समिति के सामने ? तुम मतिमन्दों को मनाने ? समझाने?··· अरे धर्माध्यक्ष । मैं विष खा लूँगा, विष···डूब मरूंगा शिप्रा में····लेकिन किसी भी मूल्य पर ····"

धर्माध्यक्ष : §बौखलाकर§ आर्य कालिदास। आप मेरा अपमान कर रहे हैं।

कालिदास : §उँचे स्वर में§ हाँ-हाँ, कर रहा हूँ अपमान··· और यदि तुम बडे स्वाभिमान वाले हो तो कभी पाँव मत रखना मेरी चौखट पर ···न राजकर्मचारीके रूप में ···"[93]

नाटक के दूसरे अंक में कालिदास और सम्राट चन्द्रगुप्त के बीच हुआ वार्तालाप रचनाधर्मिता और उसकी स्वतंत्रता पर प्रकाश डालता है। नाटक के अंत में यह दर्शाया है कि कालिदास "कुमारसम्भव" को अधूरा छोड देता है। "आठवें सर्ग के आगे कुछ लिखना नहीं चाहता है और सम्राट चन्द्रगुप्त की आपत्ति पर एक साथ व्यंग्य करता है। कालिदास के शब्दों में - "कुमारसम्भव" को मैं अधूरा ही छोड दूँगा, आठवें सर्ग पर···आगे नहीं लिखूँगा। इस रचना को एक प्रकार से भुला ही दूँगा। यह कभी मेरे घर से बाहर नही निकलेगी। किसी गोष्ठी में इसका पाठ नहीं होगा। किसी तक इसकी प्रतिलिपि नहीं पहुँचेगी।···इतने से लोग सन्तुष्ट हो जाएँगे ? फिर तो किसी को आपत्ति नही होगी ?"[94]

इस समय चन्द्रगुप्त पलभर कालिदास की ओर देखता है। सिर झुकाये बाहर चला जाता है और कालिदास निढाल-सा आसन पर बैठता है। इतने में

प्रियंगुमंजरी मंच पर प्रवेश करती है। कुछ क्षण कालिदास की ओर देखती रहती है। एक साथ कालिदास के कंधे पर रो देती है। धीरे-धीरे अंधकार हो जाता, पर्दा गिर जाता है।

स्वर्णजयन्ती और अनुपस्थिति में उपस्थिति

नाटक का तीसरा अंक मुख्यतया महाकवि कालिदास के "अभिज्ञान-शाकुन्तल" नाटक की स्वर्णजयन्ती और वसंतोत्सव के दिन कालिदास के सम्मान के आयोजन को ध्यान में रखकर लिखा गया है। इसमे कालिदास के रचनाकार के रूप में स्वतंत्रता की माँग और श्रेष्ठ रचना के कारण लोकप्रियता का शृंगार समन्वित है। नाटक का एक नारी पात्र शाकुन्तल के स्वर्ण-जयंती निमित्त होने वाले उत्सव के आनंद को प्रकट करते हुए श्रेष्ठ रचनाकार का गौरव ही करती दिखाई देती है। वह कहती है - "राजपथ पर ऐसी भीड़ है कि साँस को भी निकलने का रास्ता नहीं मिलेगा। एक तो कामोत्सव का कामना जगानेवाला दिन···फिर "अभिज्ञानशाकुन्तल" की स्वर्णजयन्ती···फिर शासन द्वारा स्वामी का अभिनन्दन··जैसे एक साथ एक ही दिन तीन-तीन त्यौहार···तनिक बाहर निकलकर तो देख, लोगों की चपलता से मानो वातावरण में भी यहाँ संगीत की ध्वनि कुछ ऊँची हो जाती है और तरंगे उठ रही हैं[96] और वातावरण मे आनंद का साम्राज्य फैल जाता है। यद्यपि "अभिज्ञानशाकुन्तल" नाटक रचनाकार मंच पर उपस्थित नहीं है फिर भी उसका कीर्तिस्तंभ प्रियंवदा के माध्यम से मंच पर दर्शकों के सामने मानो खड़ा होता है। यह कालिदास की अनुपस्थिति में एक तरह से उपस्थिति ही है।

रचनाकार की स्वतंत्रता और लोकप्रियता

नाटक के अंत में शाकुन्तल की स्वर्णजयंती के समारोह में कालिदास उपस्थित नहीं रहता है बल्कि उसकी पत्नी उपस्थित रहती है। उससे समारोह का और नाट्य-प्रदर्शन का समाचार उसको मालूम होता है। इसीकारण कालिदास नाटक के अंत में बडे आवेश के साथ चन्द्रगुप्त को फटकारता है और कहता है "जीवन के मोड़ पर सत्ता की सहायता की आवश्यकता थी···अब नहीं है।···{ठहरकर} अब ?····अगर शासन मेरी रचना पर यहाँ रोक लगायेगा, तो वह दूसरे राज्य

में सप्तम् सूर में सुनी जायेगी। मुझे बन्दिगृह में डाल देगा, तो संकीर्ण बुद्धि और कुटिल मन कहलायेगा। और अगर मेरी हत्या कर देता, तो लोकमत उसके विरुद्ध आषाढ़ के पहले काले-कजरारे मेघों के समान भड़क उठेगा।.."[97] यहाँ रचनाकार की स्वतंत्रता और लोकप्रियता सहज ही अनुमेय है।

इस प्रसंग पर कालिदास की "शाकुन्तल" नाटक की लोकप्रियता साधारण जन तक पहुँच जाती है। और कालिदास राज्याश्रित कवि न रहकर आम आदमी का सम्मानित कवि बन जाता है। श्रेष्ठ रचनाकार की यही सही पहचान है।

सन्तुष्टता और खिन्नता

नाटक का अन्त भी कालिदास की सन्तुष्टता और "कुमारसम्भव" की पाण्डुलिपि का मंजूषा में बंदिस्त हो जाने की आशंका नाटक की रंगमंचीय उपलब्धि का असाधारण प्रयोग है। इस समय रंगमंच पर यह दिखाई देता है कि कालिदास आसन पर बैठ जाता है। प्रकाश व्यवस्था दो आलोक वृत्तों में बदलने लगती है - एक कालिदास पर दूसरा नटराज पर। दृश्यान्त से कुछ पहले दूसरा प्रकाशवृत्त गायब होता है। कुछ क्षणों बाद प्रियंगुमंजरी निकट आ कालिदास को पाण्डुलिपि देती है। कालिदास पृष्ठ पलटने लगता है। प्रियंगुमंजरी कालिदास के निकट बैठ जाती है, आशंकित होती है। कालिदास फिर पन्ने पलटता जाता है सहसा दोनों एक दूसरे की ओर देखते हैं, प्रकाश लुप्त होता है, अंधकार बिखर जाता है। और नाटक का तीसरा अंक समाप्त हो जाता है। जिस "आठवाँ सर्ग" की चर्चा तत्कालीन राजगृह में तथा समाज मे फैल जाती है वहाँ"कुमारसम्भव" की पाण्डुलिपि पति-पत्नी तक ही पड़ी रहती है।

नाटककार ने प्रासंगिक रूप में संगीत, ध्वनि और प्रकाश को संकेत दिये हैं जो कालिदास की चरित्रता को उजागर करने में सहायक बने हैं।

निदेशकीय और दर्शकीय संवेदनाएँ

सुरेन्द्र वर्मा लिखित "आठवाँ सर्ग" नाटक के निर्देशक, स्वयं नाटककार और राजेन्द्र गुप्त हैं। उनकी प्रतिक्रियाएँ यहाँ दी जाती हैं -

निदेशकीय वक्तव्य -

दृश्यबन्ध

सुरेन्द्र वर्मा और राजेन्द्र गुप्त

"···गुलशन की एडवर्टाइजिंग एजेन्सी, चुस्त काफी आकर्षण विजुअल···मधू का स्मोकी टोपाज····बिंदोजित्तन का एक-दूसरे को फाड़ खाना···लोदी गार्डन के हरे विस्तार पर खुशनुमा धूप···आज की दिल्ली से एकदम चौथी शताब्दी ई·पू·को प्रत्यावर्तन स्वर्णिम गुप्तकाल की कलानुरागी राजधानी उज्जयिनी में कविश्रेष्ठ कालिदास के भवन को बाहरी कक्ष···"[98]

"कुल मिलाकर दृश्यबंध की अंतिम फिनिशिंग श्री अल्काजी की थी, जो निःसंदेह पिछले अनेकानेक वर्षों में दिल्ली रंगमंच के कुछेक श्रेष्ठ, कल्पनाशील एवं कलात्मक दृश्यबंधों मे गिना जायेगा। उसमें भारतीय अतीत के सर्वोत्तम युग के सर्वश्रेष्ठ रचनाकार के निवास की गरिमा थी, उसके परिष्कृत सौन्दर्य-बोध की झलक थी, वह सादा था, आँखों को भला लगता था और नाटकीय युक्तियों के लिए समर्थ।[99]

3· अभिनेयता

"आठवाँ सर्ग" नाटक में अनेक अनुभवी कलाकारों ने अपनी-अपनी भूमिका निभायी। "आठवाँ सर्ग" की पहली प्रस्तुति नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा रेपर्टरी कंपनी द्वारा रवीन्द्र भवन के स्टुडियो थिएटर में अप्रैल 1976 में हुई।

कलाकारों के उत्कृष्ट अभिनय के बारे में दी गयी राय उल्लेखनीय है।

मनोहरीसिंह ने लगभग दो सप्ताह की तैयारी के बाद ही खासी संवेदनशील भूमिका की। कालिदास के व्यक्तित्व की कवि सुलभ कोमलता, रचनाकार का आहत अभिमान, अकेले पड़ जाने का तनाव, अंतर्द्वन्द का दंश, विराग की घनीभूत उदासी, चरित्र के ये पक्ष वे प्रभावपूर्ण ढंग से व्यंजित कर पाये। सुरेखा सीकरी, उत्तरा बावकर (अनसूया) एवं सुधीर कुलकर्णी (कीर्तिभट्ट) भी अपने को विशेष रूप से अभिव्यक्त कर सके।[100]

4· पार्श्वसंगीत

"आठवाँ सर्ग" के संगीत निर्देशक के·एन·चोपड़ा हैं। उनके पार्श्वसंगीत से नाटक अधिक प्रभावपूर्ण ओर परिणामकारी बन पडा है। कलाकारों के अभिनय में पात्रानुकूल भावावेश सहज ही दृष्टिगोचर हुए हैं। इस नाटक के पार्श्वसंगीत के योगदान के बारे में निदेशकों की प्रतिक्रिया इसप्रकार हैं -

"कुमारसम्भव" की अधूरी पांडुलिपि देखते हुए स्थिति इतनी सघन और तनाव भरी हो जाती है। मनोहरसिंह व सुरेखा सीकरी के संवेदनशील चेहरों पर क्रमशः आक्रोश, पीड़ा एवं आहत भाव और लगाव, अपनत्व तथा सरोकारयुक्त आशंका के ऐसे रंग हैं और यह नाट्यक्षण बहुत ही प्रभावपूर्ण पार्श्वसंगीत में ऐसा तीखा, संपूर्ण ओर परिणतिमय हो जाता है कि अगले संवाद तक न वो सहज संक्रमण संभव है और न वह आवश्यक ही लगता है।[101]

डॉ·जयदेव तनेजा

"सम्राट चन्द्रगुप्त के वैभवपूर्ण ऐतिहासिक कालखण्ड ओर भारतीय साहित्य एंव संस्कृति के परम प्रतीक महाकवि कालिदास की सुरुचि-सम्पन्नता तथा सौन्दर्य-चेतना को रेखांकित करते हुए भव्य दृश्य-बंध को देखकर तथा नेपथ्य से काम की वैतालिक कोयल की कूक एवं मंच पर प्रियंवंदा के कोमल मधुर कंठ से "ऋतुसंहारम" के छठे सर्ग का दूसरा श्लोक सुनकर दर्शक पाठक वसंत के आगमन और मदनोत्सव के कालिदासकालीन समय मे अनायास संक्रमण कर जाता है।"[102]

"नाटक में कालिदास ओर प्रियंगुमंजरी के प्रथम मिलन का मनोपचारिक आत्मीय प्रेम-दृश्य और दर्पण को लेकर प्रियंगु का क्रियाकलाप यह सिद्ध करता है कि सुरेन्द्र वर्मा रंगमंच के व्याकरण को किस गहराई तक समझते हैं और संवादलेखन की दक्षता के बावजूद आवश्यकता पडने पर कैसे उनका परित्याग करके भी सघन नाट्य-क्षणों की सृष्टि करि सकते हैं।"[103]

"आठवाँ सर्ग" का एक अन्य प्रस्तुतिकरण 24 तथा 25 जुलाई 1977 को टैगोर थ्येटर, चण्डीगढ में "अभिनेत"द्वारा अतुलवीर अरोरा के निर्देशन में हुआ।

इसमें अतुल अरोरा (कालिदास), उमा बाग्ला (प्रियंगुमंजरी), संगीता थापर (प्रियवंदा), अलोका मेहंदीरत्ता (अनसूया), भारतभूषण (कीर्तिभट्ट), हरीश भाटिया (धर्माध्यक्ष), कमल अरोरा (चन्द्रगुप्त), तथा अश्विनी कुमार (सौमित्र) ने भूमिकाएँ की तथा वस्त्र-विन्यास महेन्द्र का था और संगीत सरोजिनी मराठे एवं रविन्दर सिंह का। प्रकाशक - परिकल्पक थे - अश्विनीकुमार।"[102]

"लखनऊ मे "आठवाँ सर्ग" की प्रस्तुति "संकेत" द्वारा कृ·ब·चन्द्रा के निर्देशन में 20 और 21 सितम्बर, 1977 को हुई। ऐतिहासिक परिवेश, अभिजात्य सौन्दर्यबोध और संस्कृतनिष्ठ भाषा जैसी विशेषताओं के कारण "आठवाँ सर्ग" प्रतिभाशाली निर्देशक, साधन संपन्न, संस्था और कल्पनाशील एवं प्रशिक्षित रंगकर्मियों की अपेक्षा करता है। इस प्रकार के कठिन और खर्चे खर्चीले नाटकों के अधिक मंचनों की उम्मीद नहीं करनी चाहिए।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि -

1· "आषाढ़ का एक दिन" में चित्रित कालिदास ऐतिहासिक कम और काल्पनिक ज्यादा है। इतिहास के रिक्त पृष्ठों को जोड़ने का प्रयास महत्वपूर्ण है।

2· यह कालिदास नाटककार मोहन राकेश के मंतव्य के अनुसार आधुनिक कालिदास है जो मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण हैं।

3· लेकिन इतना सही है कि समीक्षकों और दर्शको की राय "आठवाँ सर्ग" मे चित्रित कालिदास के बारे में भिन्न-भिन्न है। कुछ समीक्षकों के मत में "आषाढ़ का एक दिन" का कालिदास, कालिदास के ऐतिहासिक मिथक को तोड़ने वाला है, तो कुछ समीक्षको का अभिप्राय ऐतिहासिक कालिदास का नया रूपांतरण मोहन राकेश ने का कालिदास है।

4· संक्षेप में मोहन राकेश के "आठवाँ सर्ग" का कालिदास विवाद्य कालिदास जरूर है लेकिन उसकी मानवीयता निःसंदेह प्रशंसनीय है।

संदर्भ

1· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·29-30, संस्क·1981

2· वही, पृ·22

3· कालिदास ग्रन्थावली (कुमारसम्भव) - सम्पा·सीताराम चतुर्वेदी, तृ·संस्क·- वि·संवत् 2019, पृ·308

4· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·51, संस्क·1981

5· वही, पृ·17

6· वही, पृ·19

7· वही, पृ·54

8· वही, पृ·23

9· वही, पृ·23-24

10· वही, पृ·18-19

11· वही, पृ·58

12· वही, पृ·12

13· वही, पृ·29

14· वही, पृ·31

15· आज के हिन्दी रंग नाटक - डॉ·जयदेव तनेजा, पृ·149-150, संस्क·1980

16· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·32, संस्क·1981

17· वही, पृ·61

18· वही, पृ·65

19· वही, पृ·19

20· वही, पृ·21

21· वही, पृ·34

22· वही, पृ·38

23· वही, पृ·42

24· वही, पृ·42

25· वही, पृ·38-39

26· वही, पृ·39

27· वही, पृ·34

28· वही, पृ·40

29· वही, पृ·39

30· वही, पृ·44-46

31· वही, पृ·47

32· हिन्दी संवेदना और हिन्दी नाटक - डॉ·राजशेखर शर्मा, पृ·256, संस्क·1988

33· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·54, संस्क·1981

34· वही, पृ·58

35· वही, पृ·56

36· वही, पृ·57

37· वही, पृ·55

38· वहीर, पृ·55-56

39· साहित्य और आधुनिक युगबोध - देवेन्द्र इस्सर, पृ·125, संस्क·1973

40· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·47, संस्क·1981

41· आज के हिन्दी रंग नाटक - डॉ·जयदेव तनेजा, पृ·151, संस्क·1980

42· साहित्य और आधुनिक युगबोध - देवेन्द्र इस्सर, पृ· 117, संस्क·1973

43· इतस्ततः- जैनेद्रकुमार, पृ·102, सस्क·1962

44· साहित्य और आधुनिक युगबोध - देवेन्द्र इस्सर, पृ·112,संस्क·1973

45· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·33, संस्क·1981

46· वही, पृ·34

47· वही, पृ·34

48· वही, पृ·35

49· वही, पृ·54-55

50· इतस्ततः - जैनेंद्रकुमार, पृ·100, संस्क·1962

51· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·55, संस्क·1981

52· वही, पृ·63

53· वही, पृ·62-63

54· वही, पृ·67-68

55· हिन्दी नाटक और रंगमंच : समकालीन परिदृश्य - डॉ·ब्रजराज किशोर, पृ·72-73, संस्क·1988

56· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·41-42, संस्क·1981

57· वही, पृ·69

58· वही, पृ·28

59· वही, पृ·40-41

60 वही, पृ·40

61· वही, पृ·40-41

62· वही, पृ·48

63· वही, पृ·49

64· वही, पृ·49

65· साहित्य और आधुनिक युगबोध - देवेन्द्र इस्सर,पृ·126, संस्क·1973

66· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·50, संस्क·1981

67· वही, पृ·50

68· वही, पृ·52

69· वही, पृ·57

70· वही, पृ·18-19

71· वही, पृ·33

72· वही, पृ·38

73· वही, पृ·63

74· वही, पृ·58

75· वही, पृ·42

76· वही, पृ·72-73

77· वही, पृ·18

78 वही, पृ·73

79· वही, पृ·45

80· आज के हिन्दी रंग नाटक - डॉ·जयदेव तनेजा, पृ·151, संस्क·1980

81· समकालीन हिन्दी नाटक - डॉ·सुन्दरलाल कथूरिया, पृ·107, संस्क·1992

82· आधुनिक हिन्दी नाटक:एक यात्रा दशक 1969-78 - डा·नरनारायण राय, पृ·241, संस्क·1979

83· समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक - डॉ·राजशेखर शर्मा, पृ·256, संस्क·1988

84· वही, पृ·257

85· हिन्दी नाटक और रंगमंच : समकालीन परिदृश्य - डॉ·ब्रजराज किशोर, पृ·74, संस्क·1988

86· वही, पृ·74

87· आठवाँ सर्ग - सुरेन्द्र वर्मा, पृ·17, संस्क·1981

88· वही, पृ·19

89· वही, पृ·28-29

90· वही, पृ·34

91· वही, पृ·42

92· वही, पृ·45

93· वही, पृ·49

94· वही, पृ·58

95· वही, पृ·58

96· वही, पृ·62

97· वही, पृ·72

98· वही, पृ·10

99· वही, पृ·10-11

100· वही, पृ·12

101· वही, पृ·12

102· आज के हिन्दी रंग नाटक परिवेश और परिदृश्य - डॉ·जयदेव तनेजा, पृ·148-149, संस्क·1980

103· आज के हिन्दी रंग नाटक : परिवेश और परिदृश्य - डा·जयदेव तनेजा, पृ·149, संस्क·1980

104· वही, पृ·152-153

105· वही, पृ·153